वेदों की ओर लौटो...!

॥ ओ३म् ॥

॥ कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ॥

वेद प्रतिपादित मानवीय मूल्यों को
जन-जन तक पहुँचाने हेतु कार्यतत्पर
सशक्त एवं समर्थ प्रान्तीय आर्य संगठन

महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा का
मासिक मुखपत्र

वैदिक गर्जना

युगप्रवर्तक महर्षि दयानन्द

वर्ष १६ अंक १० अक्टूबर २०१६

महान् ऋषिभक्त को श्रद्धावनत अभिवादन!

भावपूर्ण श्रद्धांजली !

जन्म २०/०८/१९४६ ** निधन ०६/१०/२०१६

महान तपस्वी वैदिक विद्वान, लेखक व संपादक
परोपकारिणी सभा अजमेर के प्रधान प्रो.डॉ.धर्मवीरजी !

ऐसे 'धर्मवीरजी' अब नजर नहीं आयेंगें !

टी.वी.चैनल पर
आध्यात्मिक विषयों
पर प्रवचन देते हुए
डॉ.धर्मवीरजी ।

प्रसिद्ध इतिहासविद्
प्रो.राजेन्द्रजी जिज्ञासु
के साथ
डॉ.धर्मवीरजी ।

लातूर में आयोजित
पं.नरेन्द्र
जन्मशताब्दी
समारोह में
डॉ.धर्मवीरजी ने
'श्रद्धानन्द गौरव
ग्रन्थ' का विमोचन
किया।

महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा का
मासिक मुखपत्र

वैदिक गर्जना

सृष्टि सम्वत् १,९६,०८,५३,११७ | कलि संवत् ५११७ | विक्रम संवत् २०७३
दयानन्दाब्द १९३ | अश्विन | अक्टूबर २०१६

प्रधान सम्पादक
माधव के.देशपांडे
(९८२२२९५५४५)

मार्गदर्शक सम्पादक
डॉ.ब्रह्ममुनि
(९४२१९५११९०४)

सम्पादक
डॉ.नयनकुमार आचार्य
(९४२०३३०१७८)

सहसम्पादक - प्रा.देवदत्त तुंगार, प्रा.ओमप्रकाश होलीकर,
प्रा.सत्यकाम पाठक, ज्ञानकुमार आर्य

अनुक्रम

* हिन्दी विभाग *

१) क्रान्तदर्शी ज्ञानसूर्य का अस्त (संपादकीय) ४
२) सुख की तलाश में भटकती दुनियां ६
३) डॉ.धर्मवीरजी को महाराष्ट्र की श्रद्धांजली..... ९
४) पोपलीला के शिकार बहुजनों की शोकान्तिका १०
५) अभिनंदन समाचार १७
६) कार्यक्रम समाचार १८

* मराठी विभाग *

१) उपनिषद संदेश/दयानंदांची अमृत वाणी..... १९
२) ऐकावे, पण कां व कसे ? २०
३) महर्षी दयानन्द प्रतिपादित गृहस्थाश्रम २७
४) वार्ताविशेष ३२
५) दोन वक्तृत्व स्पर्धा ३३
६) सभेचे उपक्रम ३४

* प्रकाशक *
मन्त्री, महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा,
सम्पर्क कार्यालय-आर्य समाज,
परली-वैजनाथ ४३१५१५

* मुद्रक *
वैदिक प्रिन्टर्स
महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा
आर्य समाज, परळी-वै.

वैदिक गर्जना के शुल्क
वार्षिक रु.१००/-
आजीवन रु.१०००/-

इस मासिक पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा विचारों से सम्पादक मण्डल सहमत हो, यह अनिवार्य नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति मे न्यायक्षेत्र परली-वैजनाथ जि.बीड ही होगा।

संपादकीय

अहा, शोक... महाशोक ! डॉ.धर्मवीरजी चल बसे...

क्रान्तदर्शी ज्ञानसूर्य का अस्त

आज सारा आर्यजगत् शोकसागर में डूब गया है। नियती को क्या यही मंजुर था कि उसने एक महान् वेदज्ञ को हमसे छीन लिया ? हमारा क्या अपराध था कि, हम सबको बीच में ही छोडकर एक कुशल संगठक व दूरदर्शी आर्यनेता सदा के लिए हमसे बिछुड गया। आज दि.६ अक्टूबर २०१६ की प्रातःवेला में आदरणीय प्रिय डॉ.धर्मवीरजी के निधन की वार्ता सुनकर किसी को विश्वास तक नहीं हो सका कि वे आज हम में नहीं हैं। वॉट्सअप पर आते सन्देशों को पढकर हर एक आर्य हक्क-बक्का रहता और यही कह उठता -'यह क्या हो गया...?' देखते ही देखते सर्वत्र शोक की लहर छा गयी। एक ऐसे अलौकिक व्यक्तित्व, जिन्होंने अपनी अनोखी ज्ञान प्रतिभा व कार्यपद्धति द्वारा आर्यों के हृदय पर अधिराज्य स्थापित किया हो, जो कि हम सबके लिए पुरजोर सम्बल था। उनके जाने से आर्य जगत् के नभोमंडल का एक तेजोमय नक्षत्रसम कर्तृत्वसम्पन्न मार्गदर्शक लुप्त हो गया है। अभी बहुत कुछ करना बाकी था, लेकिन... **'ईश्वरेच्छा बलीयसी !'**

समग्र विश्व में ऋषि दयानन्द के मन्तव्यों को प्रसृत करने का सामर्थ्य रखनेवाले डॉ.धर्मवीरजी का अकस्माद् चले जाना यह आर्यसमाज के लिए भारी आघात है। जिधर-उधर बिमारियाँ फैली हो, मानवजाति विभिन्न रोगों से तडप रही हो, तब ऐसे में दुर्भाग्यवश उन सभी रोगों का समुचित इलाज करनेवाला तज्ज्ञ चिकित्सक ही अचानक चला जाये तो ... ! या यूं कहे कि चहुं ओर अन्धेरा छाया हो। राह भी धुंधली सी हो और ऐसे में राह दिखानेवाले सुयोग्य सारथि का ही करुण अन्त हो, तब रास्ता कौन दिखायेगा ?

प्रो.डॉ.धर्मवीरजी के बारे में क्या लिखा जाय ? ऐसी दुःखपूर्ण स्थिति में लेखनी आगे बढ नहीं रही है। एक ऐसे आर्यपुत्र जिनका जन्म केवल मात्र अपने धर्मपिता दयानन्द के व्रतों पर चलने व उनके कार्यों को पूर्ण करने के लिए ही हुआ था। अपनी ओजस्वी वाणी वं प्रतिभाशाली लेखनी के माध्यम से जहां उन्होंने वैदिक ज्ञानधारा की सरिता सारे संसार में बहाई, जिसे सुनकर व पढकर लोग पुलकित हो उठे! किसी भी पद-प्रतिष्ठा या मान-सम्मान से सर्वथा विमुक्त डॉ.धर्मवीरजीने उस पंक्ति से दूर रखा, जहां पर कुर्सियाँ पाने की होड लगी हो! ऋषिद्वारा स्थापित परोपकारिणी सभा का कायाकल्प करने में अहर्निश अपना जीवन लगानेवाले श्री धर्मवीरजी जैसे व्यक्ति आज कहाँ मिलेंगें ? अपनी अपूर्व दूरदर्शिता, अनुपमेय संगठन कौशल्य, अप्रतिम अर्थशुचिता व अनोखी धैर्यशीलता का परिचय देते हुए ऋषि की धरोहर परोपकारिणी सभा को

सर्वाधिक गतिमान बनाने में वे सर्वतोमना संलग्न रहें। जब से वे परोपकारिणी सभा से जुडे, कभी विश्राम नहीं पाया। उनका जीना व यहाँ तक कि मरना भी... सब कुछ आर्य समाज के लिए ही सिद्ध हो गया। सभा हो या पत्रिका ये दोनों डॉ.धर्मवीरजी के पर्याय बन चुके थे। सभा को आर्थिक दृष्टि से बलवती बनाने व इसके कार्य विस्तार में वे हर हमेशा ऐसे जुटे रहे, मानों श्वेतवस्त्रों वाले वे घुमते-फिरते सन्यासी ही हो !

अपने प्रवचनों व व्याख्यानों की सहजतापूर्ण शैली से वे श्रोताओं के दिलों व दिमाग से ऐसा नाता जोड देते, मानों वह भावनाओं का तार कभी न टूटता। सुननेवालों को वे विषयों की गहरायियों तक आसानी से पहुंचा देते थे। उनकी हंसमुख छवी मिलनेवाले में नया उत्साह, जोश व उमंग भर देती थी। जो भी उनके सान्निध्य में आया, वह उनके व्यक्तित्व से प्रभावित हुए बिना नहीं रहा। वे एक ऐसे स्पष्टवादी वक्ता थे, जिन्होंने कि असत्य के साथ कभी समझौता ही नहीं किया!

प्रो.डॉ.धर्मवीरजी का जन्म स्वतन्त्रता से एक वर्ष पूर्व २० अगस्त १९४६ को सन्त-सुधारकों की भूमि महाराष्ट्र के लातूर जिलांतर्गत उदगीर के समीपस्थ नांगलगांव में क्रान्तिकारी आर्य परिवार में हुआ। माता श्रीदेवीजी एवं पिता भीमसेनजी कट्टर वैदिकधर्मी थे। क्रांतिकारी नेता भाई बन्सीलालजी आपके नानाजी थे। आरंभिक शिक्षा के बाद धर्मवीरजी को अगली पढाई हेतु गुरुकूल झज्जर भेजा गया। यहाँ पर ही आपने लेखनी के संस्कार हस्तगत किए। व्याकरणाचार्य बनने के बाद आपने गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय से एम.ए. किया। पंजाब विश्वविद्यालय के दयानंद शोधपीठ से आपने पीएच.डी.की उपाधि प्राप्त की। तत्पश्चात एक-दो वर्ष राउरकेला(उडीसा) में अध्यापन कर आप सन् १९७४ में दयानंद कॉलेज अजमेर में संस्कृत विभाग के अधिव्याख्याता व विभागाध्यक्ष बनकर कार्यरत रहे। यही पर वे परोपकारिणी सभा से जुड गए और अपना समग्र जीवन ऋषि मिशन को पूरा करने के लिए लगाया। परोपकारिणी पत्रिका में छपनेवाले सम्पादकीय समाज, राष्ट्र और समग्र विश्व में व्याप्त ज्वलंत समस्याओं का समाधान दिलाने में उपयुक्त रहते थे। जब भी समस्याएं खडी होती, तब वे सम्बधित पक्ष व विपक्ष को उठाकर सूक्ष्मता से उनका समाधान ढूंढ निकालते। प्रबुद्ध पाठकों की इच्छा अब आपके सम्पादकीय लेखों के बिना कैसे पूर्ण होगी? बिना आपके आगामी ऋषिमेला कैसे मनाया जायेगा? कहीं उस भीड में हम डॉ.धर्मवीरजी को तो नहीं ढुंढते तो नहीं रहेंगे? ईश्वर ऐसे महान ऋषिभक्त की पवित्र आत्मा को शान्ति व सद्गति प्रदान करे। शोकमग्न हम आपके शिष्य श्रद्धान्जली अर्पण करते हुए बस यही कहते हैं-

'हा हन्त हन्त नलिनीं गज उज्जहार !' -नयनकुमार आचार्य

सुख की तलाश में भटकती दुनिया !

– पं.ब्रिजेश शास्त्री (वैदिकधर्म प्रचारक)

आज मनुष्य के सामने विज्ञान ने जो दिया है और दे रहा है, उसे देखते हुए प्राय: मनुष्य समाज की जडे हिल चुकी है। इसके लिए अगर में एक पंक्ति में कहूँ तो यह सही होगा कि, **''महापुरुषों की दुर्गति और नैतिक पतन हमारा।''** हमारे महापुरुषों ने यह कभी नही कहा कि आप आविष्कार मत करो या प्रगति मत करो ! उन्होंने तो सदैव इस बात को कहा है कि, 'आवश्यकता अनुसंधान की जननी होती है।' आज से लगभग ३०–३५ वर्ष पहले मानव समाज में यातायात के साधनों के देखे तो उस समय बैलगाडी, हाथी, ऊँट या घोडे आदि की सवारी होती थी। आज मानव के पास साईकल से लेकर हवाई जहाज तक उपलब्ध है। जहाँ मनुष्य को जाने में १० दिन लगते, वहाँ पर पहुँचने में आज २ घण्टे का समय लगता है। पहले मानव अपनी किसी बात को कही दूरदेश में सूचना भेजता था, तो महिने लगते थे। आज वही कार्य चन्द मिनटों में दूरसंचार के माध्यम से हो रहा है। पहले विद्या के क्षेत्र में या शिक्षा के क्षेत्र में अधिक पढे–लिखे मनुष्य नहीं थे। आज हम अनेकों डिग्रियाँ लेकर घूम रहे हैं। पहले का मनुष्य भोजन में अपने घर का बना हुआ भोजन पसंद करता था आज का इन्सान बाजार का भोजन पसंद करता है। क्योंकि उसमें माँता या बहन का प्यार होता था, पहले घर या मकान कच्चे हुआ करते थे। आज हर प्रकार से सुसज्जित मकान हैं, मनोंरजन के लिए टी.वी.है। यह सब कुछ हुआ यह मनुष्य की आवश्यकता है, लेकिन आज का मनुष्य समाज क्या इन साधनों से सुखी हुआ ?

आज का मनुष्य अपने मूल उद्देश्य से बहुत दूर गया और अपने जीवन में सब कुछ होते हुए भी असंतुष्ट है। इसका कारण हमने अपने महापुरुषों की बातों पर ध्यान नहीं दिया। महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती मानव निर्माण की अमरकृति **'संस्कार विधि'** में लिखते हैं, जिस गृहस्थी ने अपने सन्तानों का निर्माण कर लिया, उसने समस्त ऐश्वर्यों का ऐश्वर्य सब उन्नतियों की उन्नति और सारे सौभाग्यों का सौभाग्य प्राप्त कर लिये हैं। अपनी सन्तानें तो पैदा की, लेकिन मनुष्य आज के वातावरण में अपने कर्तव्य को भूल गया है। उसका परिणाम यह है कि, आज हमारे जीवन में अशान्ति, बेचैनी, उदासीनता एवं क्रूरता आ गयी और हम दु:खों से घिर चुके हैं। इसमें से निकलने का कोई रास्ता नहीं दिखाई देता है। महाभारत युद्ध में

वीर अभिमन्यु ने चक्रव्यूह में प्रवेश तो कर लिया, लेकिन वह बाहर नहीं आ सका, ठीक इसी प्रकार आज इस पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति से प्रभावित होकर मनुष्य ने इस भौतिक वातावरण रुपी चक्रव्यूह में प्रवेश तो कर लिया, लेकिन उसे निकलने का कोई रास्ता नहीं दिखाई देता हैं। क्योंकि आज चारों तरफ यही देखने को मिलता है कि बच्चों का बचपन गया, माता-पिताओं का प्यार गया और युवाओं के चेहरे से तेज गया, माता-पिताओं का सन्मान गया, मनुष्य का धैर्य गया, मानवता गयी! आज बुरी तरह से इन्सान दुःखी है और इस दुःख से दुःखी होकर माता-पिता बच्चों को कोसते है। लेकिन इसमें बच्चों की कोई गलती नहीं है। क्योंकि मनुष्य जीवन की आत्मा विचार है और हमने अपने बच्चों की मानसिकता, जो बनाई है, उसी का परिणाम आज हमारे सामने है। लेकिन आज मानवता को बचाना है, तो हम ऋषियों व महापुरुषों के विचारों पर चिंतन करना पडेगा। जिस प्रकार गर्भ में अभिमन्यु ने अपनी माता द्वारा अपने पिता अर्जुन से कहानी के माध्यम से चक्रव्यूह में प्रवेश करना सीखा था, ठीक उसी प्रकार हमें वह संस्कारों की परिपाठी को लाना होगा। आज हम कहते हैं -बच्चे किसी की सुनते नहीं, किसी का सन्मान नहीं करते, आलसी व प्रमादी होते जा रहे हैं।

ऋषियों की परम्परा में मानव का निर्माण करने के लिए संस्कारों का बहुत महत्त्व था। गर्भाधान से पूर्व संयम एवं सावधानियों पर ध्यान गर्भ के पश्चात् अर्थात ईश्वर मनुष्य के शरीर की रचना करता है। लेकिन बच्चे को बलवान, बुद्धिमान, धर्मात्मा, सत्वगुणी अथवा कायर, क्रूर, आलसी, प्रमादी, रजो गुणी या तमोगुणी बनाने का कार्य तो माता का है। पुंसवन संस्कार में मां को भोजन पर अधिक ध्यान देना होगा। **'जैसा खाये अन्न, वैसा बनें मन।'** अर्थात् क्या खाना है, क्या नहीं खाना है, कब खाना है, कब नहीं खाना है, और कितना खाना है, कितना नहीं खाना है ? अपनी रसना इन्द्रिय पर पूर्ण अधिकार रखते हुए अधिक तिखा, खट्टा, मीठा, चटपटा आदि त्याग करना और इसका भी ध्यान रखना होगा कि आज ईश्वरभक्ति के गलत स्वरुपार्थ उपवास, व्रत आदि का करना निषेध है अर्थात् न तो भूखे रहना है न अधिक भोजन करना है। लेकिन हम अपने नेत्रों से जैसा दृश्य देखते हैं, वैसा ही मन पर प्रभाव पडता है। कहा गया है कि **'जैसी दृष्टि, वैसी सृष्टि'** तो गर्भ अवस्था में हमे देखने योग्य दृष्यों को ही देखना है। अभद्र, अश्लील दृष्यों को नहीं देखना, इसके साथ ही हमें क्या सुनना है क्या नहीं सुनना है ? श्रव्य अर्थात् श्रवण भी अन्न है, कहीं

अश्लील गानों से हमारा मस्तिष्क भरा हुआ है, तो बच्चे पर उसी का प्रभाव पडेगा । वह बडा होकर अश्लील हरकतें एवं गन्दे गाने अवश्य ही गायेगा । खाने योग्य पदार्थ दूध, दही, फल, शहद, घृत आदि का अधिक सेवन करें, लेकिन अधिक भोजन न करे ।

'युक्ताहारविहारस्य युक्तकर्मचेष्टसु, ...आहारशुद्धौ सत्वशुद्धि सत्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः ।'

कवि के शब्दों मे कहें तो –

'मन की हवस तन को बना देती है ।'
सारे बाग को बीमार बना देती है।'

हमें अपने मनमन्दिर की सफाई अवश्य ही करनी पडेगी । तब जाकर हम अपने मनुष्य जीवन के उद्देश्य को सफल कर सकते हैं क्योंकि वेद ने कहा है–**'हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मन शिवसंकल्पमस्तु।'**

अपने मन मन्दिर की सफाई के लिए १) नम्रता रुपी झाडू हाथ में लेकर झाडू लगानी होगी। २)श्रद्धारुपी आसन सिद्ध करना पडेगा । ३)पैर प्रक्षालन के लिए अश्रुरुपी जल से पैर धुलने होंगें, तभी अपना अन्त:करण पवित्र होगा । ४) प्रेमरुपी जीवन में पुष्प अर्पित करने पडेंगे । ५) विश्वासरुपी थाली में ज्ञानरुपी दीपक और धूप लेकर आरती करनी होगी। यह भाव ही हमे एवं हमारी सन्तों को पवित्र कर सकता है । जिस प्रकार ईश्वर बिना अपने अंग प्रत्यंग के सृष्टि को रचना करता है ठिक वैसे ही यह मन भी बिना किसी कारण के रचना करता रहता है । हमें सदैव ध्यान देना होगा कि, ईश्वर की कृति अर्थात् मनुष्य शरीर की रचना ईश्वर करता है, मगर इसे ठीक से सजाने अर्थात् बलवान, पराक्रम आदि बढाना मनुष्य का कार्य है ।

एक माली ने बहुत सुन्दर फल, फुलदार एक सुन्दर बगीला लगाया । उस बगीचे को देखकर हर मनुष्य आकर्षित होता और बगीचे के मालिक अर्थात माली की प्रशंसा करता चला जाता, लेकिन एक मनुष्य ऐसा आया कि सुन्दर बगीचे को देखकर माली की प्रशंसा तो की ही, लेकिन साथ ही साथ बगीचे की नाली से कही पानी निकलता हुआ देखा, तो उसे रोकता है । कहीं अस्त-व्यस्त कोई वस्तु पडी है, तो उसे संभालता है । कहीं कांटें या घास आदि हैं, तो उन्हे साफ करता है, साथ में माली की प्रशंसा भी करता चला जाता है । इसी प्रकार चलते २ माली के निकट पहुँचता है, तो माली उस व्यक्ति से अतिप्रसन्न होता है । ठीक इसी प्रकार यह संसाररुपी बगीचा उस ईश्वर ने बनाया है जो व्यक्ति इसे जितना सुंदर ढंग से इसे संभालता है, या देखभाल करता है, तो ईश्वर उस व्यक्ति पर अपनी कृपा दृष्टि अवश्य रखता है, अर्थात् उसे आशीर्वाद प्रदान करता है ।

ईश्वर के संसाररुपी बगीचे में जो

व्यक्ति आपस में भाई-भाई या मनुष्य-मनुष्य में आपस में फूट डालते या झगडा करते व कराते हैं, वे सदा पैरों तले दबाये जायेंगे और जो व्यक्ति दोनों भाई या किसी भी व्यक्ति के विचारों में मतभेद होता है और उनको सदैव आपस मिलाता है, एक दूसरे से प्रेमभाव से जोड देता है ऐसा मनुष्य ही समाज में सम्मान के पात्र होता है। ऋषि ने तो इसलिए लिखा है - 'संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश है।'

****

- आर्य समाज, गाजियाबाद(उ.प्र.)
मो.९८९९१३९४५४

महाराष्ट्र सभा की आर्यनेता को श्रद्धांजलि

'डॉ.धर्मवीरजी हमारे ऊर्जास्त्रोत थे।'

ऋषि दयानन्द के सपनों को साकार करने में अहर्निश संलग्न तपस्वी व्यवितत्त्व प्रो.डॉ.धर्मवीरजी के अकस्मात चले जाने से हम सभी को बहुत ही दुःख हुआ है। आर्यजगत् की अपूरणीय क्षति के साथ ही एक वेदों का मर्मज्ञ हमसे बिछुड गया है। वे हमारे लिए प्रेरणास्तंभ व ऊर्जास्त्रोत थे। महाराष्ट्र की सन्तभूमि मराठवाडा में जन्मे श्री धर्मवीर जी ने अजमेर(राजस्थान) को अपनी कर्मभूमि बनाया और ऋषि की अमूल्य धरोहर परोपकारिणी सभा की उन्नति में चार चाँद लगा दिये। इस सभा को पुनर्जीवित कर सर्वाधिक उन्नत बनाने का श्रेय डॉ.धर्मवीरजी को जाता है। वे वैदिक धर्म के दीवाने व परम ऋषिभक्त थे। उनकी वाणी से बहती वेदों की अमृतधारा श्रोताओं के हृदय को स्पर्श करती थी। तर्कनिष्ठ लेखनी के माध्यम से वे वैदिक सत्यमत को स्थापित करने में काफी सफल रहें। परोपकारी पाक्षिक में छपनेवाले सम्पादकीय लेख पढने के लिए आर्यजन लालायित रहते थे।उनकी लेखनी विरोधी विचारों को प्रत्युत्तर देने में सदैव तत्पर थी।

महाराष्ट्र सभा द्वारा आयोजित विभिन्न कार्यक्रमों का निमन्त्रण हार्दिक स्वीकार कर डॉ.धर्मवीरजी सदैव हमारे मध्य में उपस्थित होते और अपने सारगर्भ विचारों से अनुग्रहित करते थे। महाराष्ट्र की आर्य जनता आपके विचार व कार्यों को कभी भुला नहीं पायेगी। आपकी मृत्युवार्ता को सुनकर हम सबपर वज्राघात हुआ है। सभा के सभी पदाधिकारी, आपके मित्रजन, उदगीर व वडवल में रहनेवाले आपके भाई-बहन, सारा परिवार व समस्त महाराष्ट्रवासी आर्यजन आपको शतशः अभिवादन करते हुए भावविभोर होकर श्रद्धासुमन अर्पित करते हैं।

- सभा के सभी पदाधिकारी एवं समस्त आर्यजन, महाराष्ट्र

पोपलीला के शिकार बहुजन समाज की शोकान्तिका

– डॉ.ब्रह्ममुनि(प्रधान, महाराष्ट्र आर्य प्र.सभा)

एक जमाने में भारत विश्व का गुरु था। यहाँ के राजाओं का सर्वत्र चक्रवर्ती राज्य था। वेदानुसार जीवनपद्धति व समाजरचना विद्यमान थी और सर्वत्र आदर्श राज्य चलता था। यहां का चरित्रबल ऊँचा था। विद्वान् व राजा सभी पक्षपातरहित, सत्यप्रिय, धार्मिक, न्यायी और सबके कल्याण व हित में सोंचनवाले थे। उनमें मानवता, सच्ची ईश्वरभक्ति, मानवीय मूल्य, भूतदया आदि बातें प्रचुर मात्रा में थी। विद्वान लोग सभी को पक्षपातरहित वेद का ज्ञान देते थे। **'वेद का पढना–पढाना'** सब विद्वान् किया करते थे। उंच–नीचता आदि कुछ भी भेदभाव नहीं था। चारों वर्ण गुण, कर्म व स्वभाव के अनुसार चलते थे, न कि जन्म से। किन्तु महाभारत के युद्ध के एक हजार वर्ष पूर्व से ये उपरोक्त मान्यताएँ बदलती गयी। संकुचित व स्वार्थी पक्षपातवृत्ति बढते गयी और वर्ण व्यवस्था जन्म से हो गयी। बाद में लोग इसी को ही जाति मानने लगे और आगे चलकर जन्म के साथ ही व्यापार–धन्दा भी जोडा गया। इसी आधार से जातिव्यवस्था दृढ होते गयी। विद्वानों ने **'वेदों का पढाना (जन्मतः) ब्राह्मण वर्ग तक ही सीमित'** किया। वेद के अध्ययन से स्त्री और शूद्रों को वंचित रखा गया। ब्राह्मणेतर जाति के लोग, जिन्हें कि **'बहुजन'** कहते हैं, उनका भी वेदाध्ययन बन्द किया, उन्हें वेद के शाश्वत ज्ञान से और सुसंस्कारों से वंचित किया गया तथा उन्हें नीच समझा जाने लगा। ब्राह्मण स्वयं को उच्च वर्णीय समझने लगा। वेद के विद्वान भी स्वार्थी व मतलबी होने से उनका भी शाश्वत ज्ञान कम होते गया। उन्होंने वेदों को कंठस्थ करके संभाल तो लिया, किन्तु अर्थ गलत लगाये गये। इससे उनका भी ज्ञान और संस्कार बिघडते गये। उनका ब्राह्मणत्व भी कम हुआ और आचरण भी बिघडते गया। ब्राह्मणेतर लोगों के लिए वेद के विद्वानों ने पोथी व पुराण रचे और उन्हें ही उन्होंने पढाने लगाये।

ब्राह्मणेतर लोगों का वेदाभ्यास छुटने से उनसे संस्कृत भाषा भी छूट गयी। उनके लिए अनेकों भाषाएं बनाई गयी। इसके बावजूद बहुजनों के बच्चे–बच्चियों को मूलभूत संस्कारों से दूर रखा गया। इनके लिए अलग संस्कार बनाये गये। इस तरह से ब्राह्मणेतर लोग मूल वेद व वेद के शाश्वत ज्ञान से तथा वैदिक भाषा व संस्कृत भाषा से तथा नित्य कर्म व सुसंस्कारों से दूर रखे गये। उन्हें नीच समझा जाने लगा। उनके यज्ञ, योगाभ्यास, यज्ञोपवीत आदि सब छूट

गये । तथाकथित विद्वानों ने 'बहुजन समाज यज्ञोपवीत धारण कर नहीं सकता, यज्ञ कर नहीं सकता', इस तरह के नियम बनाए । उनके लिए सत्यनारायण, पांडवप्रताप, शिवलीलामृत आदि-आदि ग्रन्थों को पढने की व्यवस्था की गयी व प्रथा भी चल पडी । सामाजिक बंधन कडे हो गये । राजा को भी तथाकथित वैदिक विद्वानों व ब्राह्मणों की बातें माननी पडती थी तथा वह ब्राह्मणों के अनुसार ही न्याय देता था। शूद्रों और महिलाओं ने यज्ञोपवीत धारण करना नहीं, गायत्री मंत्र उच्चारण करना नहीं तथा तपश्चर्या, योगाभ्यास भी करना नहीं, इस तरह के नियम व कानून बनाये गये । हर एक जाति के अलग-अलग गुरु हो गये । फिर अलग-अलग गुरु मंत्र भी बनाये गये। खान-पान बिघडते गया । ब्राह्मणों के आचरण व उनकी ज्ञान साधना भी बिघडती गयी। यज्ञों में पशुबलि देने जैसी कुप्रथाएँ शुरु हो गयी । फिर उपर से लेकर नीचे तक हर एक व्यक्ति स्वयं को बडा और नीचेवालों को नीच(छोटा) समझने लगा । अपने को विद्वान बताकर अन्य लोगों को प्रश्न पूछने पर भी पाबंदी लगायी गयी। 'गुरु जो कहता है तथा बाबा जो बोलता है, उसको ही सही मानें । उसी पर विश्वास व श्रद्धा रखे और उन्हीं के अनुसार चले।' इस तरह की प्रथाएँ चल पडी । इससे अधिक मात्रा में अज्ञान व अंधविश्वास फैलता गया। ईश्वर व धर्म के बारे में अनेक मत बन गये । परिणामत: समाज एकसंगठित नहीं रहा, बल्कि विघटित हुआ। उन गुरुओं ने अपने-अपने से निम्न लोगों को फंसाया और स्वयं की गलतियां छुपाने के लिए शास्त्रों में प्रक्षेपण किये तथा उस स्थान पर अपने मनगढन्त विचार डाल दिये ।

समाज में मानवी मूल्य, सच्चरित्र, भूतदया कम होते गयी, तो भी गुरुओं ने समाज का शोषण करना छोडा नहीं। शोषण करने के लिए उन्होंने बहुजन समाज में मृतक श्राद्ध, पितृपक्ष, मूर्तिपूजा आदि परम्पराएँ शुरू की तथा ऐसे धन्दों से वे अपनी दक्षिणा इकठ्ठी करते रहें । इससे समाज में अनेक मत व पंथ बनते गये । धर्म के नाम पर दु:ख, अन्याय, अत्याचार, क्रूरता, हिंसा आदि बातें बढते गयी। बहुजन समाज अज्ञान व अंध:विश्वास के साथ ही बुरी अंध परंपराओं व कुप्रथाओं का शिकार हो गया । तथाकथित **'उन श्रेष्ठ विद्वान लोगों ने'** सामान्य अज्ञ लोगों को डर दिखाया कि, **'हम जिसे ईश्वर, धर्म व जाति कह रहे हैं, जो कुछ करने लगा रहे हैं, उन्हीं को ही आप मानें, अन्यथा सबका सर्वनाश हो जायेगा।'** इन बातों से बहुजन समाज बहुतही भयभीत होता गया । ज्ञान, तर्क व विद्वानों की संगती का अभाव होने से तथा वेदज्ञान भी न मिलने से यह समाज दिशाहीन हो गया । बुद्धि को

ताले लगाकर, आँखों पर पट्टी बाँधकर बुरी परम्पराओं में बहुजन समाज घसीटता गया व शोषित हो गया। इस तरह उसे दिनों दिन अपमान व अन्याय सहने पडे।

शोषकों का यह मूर्खतापूर्ण खेल और वह भी ईश्वर, धर्म, नीति आदि के नाम पर देखकर बहुजन लोग जाग उठे। शोषित बहुजन समाज का अपमान व अन्याय देखकर कुछ पुण्यात्माएँ क्रांतिकारी बनकर अज्ञान, अंध:विश्वास व कुप्रथाओं के विरोध में खडे हो गये । इसी के लिए उन्होंने अपना सारा जीवन लगा दिया । किन्तु प्रस्थापित शोषक वर्ग ने इसकी ओर थोडा भी ध्यान नहीं दिया । म.गौतम बुद्ध, म.बसवेश्वर, संत ज्ञानेश्वर, संत तुकाराम, एकनाथ, चोखा मेला, रामदास, कबीर, नानक, तुलसी आदि साधु-सन्तों व सुधारकों ने इस व्यवस्था को बदलने की कोशिश की, किन्तु बहुजन समाज भी और उनके गुरु, पंडे, पुजारियों की अनिष्ठ परंपराओं में ही फंसते रहे । उन्हें शाश्वत सत्य तक ले जा नहीं सके । ऐसे में गुजरात की पावन भूमि में स्वामी दयानंद जैसे युगपुरुष ने जन्म लिया । उन्होंने कडी तपस्या से वैदिक सत्यज्ञान प्राप्त किया। अविद्या व अंध:कार को दूर करने के लिए अपना संपूर्ण जीवन लगाया। समाज को इन पोपों की लीलाओं से बचाने का प्रयास किया । ईश्वरोपासना, वेदाध्ययन व योगाभ्यासद्वारा उन्होंने शाश्वत सत्य तथा ईश्वरीय वाणी को सामान्य लोगों के सामने रखा और घोषणा की कि, 'वेदमंत्र पठन के साथ ही वेदों का अध्ययन कोई भी मनुष्य अथवा महिला कर सकती है।' शुद्ध वेद ज्ञान, विशुद्ध संस्कार व आदर्श परम्परा समाज को बताकर पोपलीला से उसे बचाने की व्यवस्था की । सामान्य जनों को वेद के आधार पर एक ईश्वर, एक मानव धर्म, एक मानव जाति तथा एक ही उपासना पद्धति एवं आत्मकल्याण का रास्ता बताकर दुनिया को श्रेष्ठ मार्ग पर लाने का प्रयास किया । वेद अध्ययन के द्वार समग्र मानव जाति के लिए खोल दिये । वेदज्ञान का अधिकार हर एक मानव को प्रदान किया । स्त्री व पुरुषों को यज्ञोपवीत धारण करने का भी अधिकार दिया । साथ ही नित्य कर्म, उपासना, यज्ञ आदि की अनुमति सभी को प्रदान की । वेदज्ञान के अनुसार वर्णव्यवस्था का आधार गुण, कर्म व स्वभाव बताया । ब्राह्मणत्व जिसके पास है, वह ही सच्चा ब्राह्मण है और 'कोई भी व्यक्ति तप व साधना द्वारा ब्राह्मण बन सकता है', यह डंके की चोट के साथ बताया। वैदिक विचारों के प्रचार व प्रसार के लिए **'आर्य समाज'** जैसी महान संस्था की स्थापना की । सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि आदि ग्रंथों का प्रणयन किया। जगह-जगह घूमकर राजाओं व विद्वानों से मिलकर सत्य वैदिक धर्म को फैलाने का प्रयास किया ।

उनके अनेकों शिष्य बन गये । इन्हीं में से स्वामी श्रद्धानन्द, पं.लेखराम, लाला लजपतराय, पं.गुरुदत्त आदियों ने समाज में सुधार लाने का प्रयास किया । आर्य समाज से जो काम हुआ तथा गुरुकुल आदि संस्थाओं से जो वेद विद्या के प्रसार का कार्य हुआ, वह सब वेद के शाश्वत ज्ञान के आधार पर ही था । स्वामी जी के प्रभाव से ही बहुजन समाज में वेद के पंडित व विदुषियाँ तैयार होने लगी। संस्कृत भी सब की भाषा बन गयी। शूद्रों को भी ब्राह्मण, वेदपंडित, विद्वान व पुरोहित बनने लगे। स्वामी जी के शिष्यों ने कन्या गुरुकुलों की अलग से स्थापना की । इन गुरुकुलों में पढकर अनेकों कन्याएँ वेद ज्ञान की अधिकारिणी बन गयी । वेद व आर्ष ग्रन्थ का अध्ययन, यज्ञ, पौरोहित्य तथा अन्य सभी धार्मिक संस्कार करने में भी आर्य विदुषी महिलाएँ आगे आती रही । स्वामीजी के प्रभाव से ही नारी शक्ति का उद्धार हुआ और वह केवल घर व बच्चों तक ही सीमित न रहते हुए राष्ट्र व समाज के सुधार में भी आगे आते रही। ऋषि के कारण ही अध्यात्म, संस्कृति तथा योगाभ्यास आदि क्षेत्र में भी महिलाओंने काफी प्रगति की है । स्वामीजी के प्रयासों से ही आज तक बहुजन समाज के विशेषत: शूद्र परिवार में जन्में हजारों लोग ब्राह्मणत्व को प्राप्त हुए और वे आज भी देश व समाज को वे वेद का शाश्वत ज्ञान बता रहे हैं । आर्य समाज के प्रचार कार्य में व गुरुकुलीय अध्ययन, अध्यापन में आज भी बहुत सारे विद्वान बहुजन समाज के ही हैं ।

महर्षि दयानन्द की यह विशेषता रही कि विगत पाँच सहस्त्र वर्षों के अन्ध:कार को चीरते हुए उन्होंने समस्याओं की जडों के हिला दिया व मूलभूत सुधार लाने का प्रयास किया। अन्य सुधारक मात्र प्रतिक्रियावादी बनते गये और उन्होंने ईश्वर की सत्ता, वेदज्ञान व आर्ष तत्त्वज्ञान को पूर्णत: छोड दिया तथा पक्षपातपूर्ण विचारों को अपनाते हुए समाज को वेदविरोधी दिशा दी। वस्तुत: तो यही होना चाहिए था कि पोपों व पौराणिकों द्वारा किये वेदमन्त्रों के मनमाने अर्थों के समुचित कल्याणकारी अर्थ लगाने चाहिये थे। महर्षि दयानन्द कभी भी प्रतिक्रियावादी नहीं बने। वेदज्ञान से दूर गये संसार को उन्होंने अपनी अनूठी साधना द्वारा वेदों के यथार्थ ज्ञान का प्रकाश दिया। अनूठी तपश्चर्या व साधना द्वारा स्वामीजी ने वैदिक विचारों की क्रान्ति की और शाश्वत सुख की प्राप्ति हेतु समग्र विश्व को वेदज्ञान की राह बताई। पक्षपातविरहित नीति व न्याय के माध्यम से सबका सर्वकाल कल्याण करने के लिए उन्होंने अपना सर्वस्व न्योछावर किया। स्वामीजी के बहुजन उद्धार कार्य के परिणामस्वरुप ही उन्हीं से प्रेरणा से राजर्षि

शाहु महाराज, म.ज्योतिबा फुले, डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर, तुकडोजी महाराज आदियों ने समाज सुधार के लिए अथक प्रयास किये। किंतु इन सभी के सुधार कार्य के मूल में वेद ज्ञान न होने से इनके प्रयास भी अधुरे ही रह गये । ब्राह्मणत्व लाने तथा ज्ञान, गुण, कर्म व स्वभाव बदलने की ओर इनका अधिक ध्यान नहीं रहा । फिर सभी ने अपनी-अपनी जाति संभालने का प्रयास किया । आजकल की आरक्षण की नीति ने और भी मजबूत किया है । इसका पोपलीलावालों को और भी अधिक लाभ हुआ। आज गलत परम्पराएँ, कुरीतियाँ, अज्ञान, अंध:विश्वास बढते ही जा रहा है । पंथवादी लोगों में तथा सामान्य लोगों में भी अज्ञान व अंधविश्वास बडे पैमाने पर है । पोपलीलावाले गुरु लोग इन्हें संभालने में लगे हैं । आज परम्परा के नाम पर और **'अपनी-अपनी श्रद्धा'** के नाम पर अज्ञान व अविद्या को संभालने के लिए पोपलीलावालों का प्रयास जारी है। जिसके लिए ज्ञान, गुण, कर्म व स्वभाव का काम करना है, वह भी नहीं मान रहा है और जिनके विरोध में क्रान्ति करनी थी, वे भी सत्य, शाश्वत ज्ञान को मानने के लिए तैयार नहीं हैं । इसलिए बहुजन समाज ईश्वरीय शाश्वत ज्ञान, गुण, कर्म व स्वभाव को बदलने व उन्हें बढाने के लिए आगे नहीं आ सका।

पोपलीलावाले लोगों ने महापुरुषों के नाम लेकर पुनश्च अपने अज्ञान की बात जारी रखी है । गीता, संत ज्ञानेश्वर व ज्ञानेश्वरी आदि नाम तो लेंगें, परन्तु उनके नाम पर मूर्ति पूजा, मृतक श्राद्ध, जातिवाद व अन्य गलत परम्परायें मजबूत करते रहेंगें ही। ये लोग म.बसवेश्वर जैसे महापुरुषों का नाम लेकर मूर्तिपूजा, जातिवाद, ऊंच-नीचता, छुआ-छूत आदि सबकुछ बढा रहे हैं। राजनीति के लोग तो आज 'वोट बैंक' को बनाये रखने के लिए समाज में जातिवाद, पंथवाद को बढावा दे रहे हैं । उनका तो मतलब ही स्वार्थी है , तब वे ऐसा करेंगे ही । साधु-संतों का नाम लेकर उन्हें पूजनीय बताकर उनके ही नाम पर फिर से मूर्तिपूजा, जातिवाद चला रहे है ।

देश की स्वतन्त्रता के बाद सरकार ने राष्ट्रीय एकात्मता को बढावा देने के लिए बहुत प्रयास किये, किन्तु यह एकात्मता भी आरक्षण के कारण निकम्मी हो गयी । आज समाज में हर कोई जगद्गुरु, बाबा, भगवान आदि बन रहा है और स्वयं को सबसे श्रेष्ठ बता रहा है । अज्ञान, अंधविश्वास व लालच आदि द्वारा ये लोग सामान्यों को उग रहे हैं। यह अवस्था किसी एक पंथ की नहीं, बल्कि सभी पंथों की है । ये धूर्त व पाखंडी लोग स्वयं को धार्मिक बताकर अधार्मिक काम कर रहे हैं। आधुनिक विज्ञान जो कि विभिन्न प्रयोगों द्वारा ही सत्य की खोज कर रहा है और अंधविश्वास में फंसी

हुई दुनिया को इन पोपलीलाओं के दुष्ट चक्र से बाहर निकालना चाह रहा है । इसके लिए परिपूर्ण सिद्धांत, तकनीकी सामग्री तथा (पक्षपातरहित) सुख के साधन वितरीत कर रहा है, किंतु दुर्भाग्य से यह आधुनिक विज्ञान भी अज्ञान, अंधविश्वास, धर्म-कर्म व मूर्तिपूजा के चक्कर में हैं । पंथवाद व जातिवाद में अटक गया है । पोपलीला ने इसे भी बांधकर रख दिया है । स्वतन्त्रता के बाद शिक्षा व्यवस्था में बडी क्रांति की । देहातों में भी सरकारी स्कूल व कॉलेज द्वारा शिक्षा की सुविधा हुई । बहुजन वर्ग ने शिक्षा संस्थाएं भी खोली । इससे सभी स्तर के लडके-लडकियों को पढने-लिखने का सुअवसर मिला । अनेकों छात्रवृत्तियाँ मिलने लगी । दलित व पिछडे परिवार के बच्चों को उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए आरक्षण की व्यवस्था हो गयी । इससे बहुजनों को बहुत लाभ भी मिला । परिणामस्वरुप आज बहुजन समाज अनेकों लडके-लडकियाँ, डॉक्टर, इंजिनिअर, अधिकारी, वकील, प्राध्यापक, शिक्षक, आदि पदों पर काम कर रहे हैं। आर्थिक दृष्टि से सुविकसित हो रहे हैं । इनके रहन-सहन में बहुत सुधार आया है । फिर वही दुर्भाग्य...! अविचारों के कारण इस पीढी में व्यसनाधीनता, भ्रष्टाचार और आलस्य प्रमाद आदि दोष भी बढते गये । समाज में 'अधिकारी यह तो खाने-पीनेबाला तो होता ही है', यह धारणा बढ गयी । इस तरह शाश्वत सुधार व प्रगति के स्थान पर अधोगति ही होती रही । विपुल मात्रा में धन व अधिकार मिलने पर अज्ञान, अंधविश्वास, धार्मिक कुपरंपराएँ आदि बातों को बढावा मिलता रहा। योग्य विचार न होने से बहुजन वर्ग दुःख, निराशा व बिमारियों में फसता गया। इस तरह आध्यात्मिक सुधार से वह पूरी तरह से दूर होता गया। जीवन विषयक सत्य शाश्वत ज्ञान, सुसंस्कार, ईश्वर, धर्म, मानवजाति, सच्चरित्रता, धार्मिकता, तत्त्वज्ञान, ब्राह्मणत्व, संयम, योगाभ्यास, आत्मकल्याण आदि बातों की ओर बहुजन समाज का ध्यान ही नहीं गया। आज भी वह केवल धन-दौलत, झूठी प्रतिष्ठा, मान-सम्मान, स्वयं का बढप्पन आदि बातों में फंसते जा रहा है । यह समाज अपने गरीब बंधुओं को सद्विचार देने व उसे संस्कारित करने हेतु ब्राह्मणत्व, ज्ञान, त्याग, तप, समर्पण की परंपरा निर्माण कर नहीं सका । आज भी बहुजन वर्ग के लोग अपनी सरकारी सेवा से निवृत्त होने के बाद पेन्शन मिलते हुए भी सामाजिक, शैक्षिक सेवा व सुधार कार्य करने तथा समाज को मार्गदर्शन करने के काम में संलग्न नहीं है । फिर एक बार धन सम्पत्ति जुटाने में लगे हैं । इसी कारण समाज में अज्ञान, अंधविश्वास, दुःख,

अशांति, आत्महत्याएं व मानसिक बिमारियाँ बढती जा रही हैं । बहुजन समाज के आलस्य व कर्महीनता के कारण ही सम्प्रति समाज में अधार्मिकता, पंथवाद, जातिवाद, अन्याय, अत्याचार, हत्याएँ, बलात्कार, क्रूरता आदि दोषों को बहुत बढावा मिल रहा है । शाश्वत ज्ञान व मूलभूत गुणवत्ता को प्राप्त करने का हमारा लक्ष्य पूर्ण नहीं हो रहा ।

बहुजन समाज के सभी गुरु व विद्वान् आदि सभी ने जो-जो था, वह-वह संभालने का प्रयास किया । इससे दुःख बढाने का ही काम हुआ है । इसलिए आज भी बहुजन समाज पहले से ही अधिक मात्रा में अज्ञान व अंधविश्वास में लिप्त है । बहुजन समाज के विद्वान लोग कुछ भी वैचारिक क्रान्ति अथवा सुसंस्कारों में वृद्धि करना नहीं चाहते । आध्यात्मिक क्षेत्र में भी वे मूल तक नहीं जाना चाहते। इनका प्रयास तो विपरीत दिशा की ओर ही है। अपनी पुरानी अंधपरम्पराओं, रुढियों व कुप्रथाओं को सुरक्षित रखने व उनमें बढावा देने के लिए वे प्रयास कर रहे हैं । इन्हीं बातों के लिए उनका त्याग व समर्पण जारी है, जो कि गलत दिशा में है । बच्चों को भी बचपन से ही पौराणिक पूजापाठ की विधियाँ सीखा रहे है । वेदपाठ के नाम पर फिर से अज्ञानवादी अंधविश्वास को बढावा मिल रहा है । पुजारियों, पंडितों, बाबाओं व गुरूओं की संख्या बढते ही जा रही है । जगह-जगह मंदिरों की स्थापना होकर मूर्तियों में प्राणप्रतिष्ठा का स्तोम बढता दिखाई दे रहा है। आर्यसमाज जो कि, वेद की शाश्वत ज्ञान के लिए ब्राह्मणत्व, योग, अध्यात्म आदि बातें गुण कर्म व स्वभाव के आधार पर बढाने के लिए तथा जीवन को ऊँचा उठाने व त्याग, तप, समर्पण व सबकी भलाई के लिए काम कर रहा है। इस संस्था के साथ जुडकर बहुजन समाज को अपनी सर्वांगिण प्रगति करनी चाहिए । आर्य समाज के सत्संगादि कार्यक्रमों में सम्मिलित होकर विद्वानों के सानिध्य से वेदज्ञान ग्रहण करना चाहिए। वेदादि पवित्र ग्रन्थों के स्वाध्याय एवं सत्संग के माध्यम से ज्ञान, कर्म व उपासना का पथ स्वीकारेंगें, तो निश्चय ही समाज से अज्ञान दूर होता जायेगा । जातिप्रथा जैसी बिमारी भी नष्ट हो जाएगी । सभी लोग आध्यात्मिक प्रगति का रास्ता अपनायेंगें, तो निश्चय ही शाश्वत सुख व आनंद में वृद्धि होगी। यदि बहुजन वेदज्ञान को अपनायेंगें व अपने जीवन को उन्नत करेंगें, तो उनके इन शुभ प्रयासों से निश्चय ही पोपलीलाएँ बंद होगी और पाखंडवाद समाप्त होगा। परिणामस्वरुप सभी में धार्मिक व आध्यात्मिक सुधार आयेगा। इससे व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र की कोई भी समस्या नहीं रहेगी और सारा विश्व शाश्वत सुख के मार्ग पर चलता रहेगा । सिवाय इसके कोई भी अन्य मार्ग नहीं है। * * *

डॉ.वाघमारे को 'जीवनगौरव पुरस्कार'

प्रसिद्ध शिक्षाविद, पूर्व राज्यसभा सदस्य एवं स्वा.रा.ती. मराठवाडा विश्वविद्यालय के संस्थापक उपकुलपति डॉ.जनार्दनरावजी वाघमारे को हाल ही में सहकार महर्षि पद्मश्री विठ्ठलराव विखे पाटील स्मृति 'साहित्य सेवा जीवन गौरव पुरस्कार' से सम्मानित किया गया । सामाजिक कार्य तथा शिक्षाक्षेत्र में व्यापक सुधार कार्य हेतु श्री वाघमारेजी को प्रवरानगर (लोणी जि.नगर) म आयोजित विशेष समारोह में मान्यवरों के शुभ करकमलों से रु.१लाख, स्मृतिचिन्ह, गौरवपत्र, शॉल व पुष्पहार प्रदान कर सम्मानित किया गया । इस अवसर पर सर्वश्री रामराजे निंबालकर (अध्यक्ष, महाराष्ट्र विधानपरिषद), श्रीपाल सबनीस(अध्यक्ष, अ.भा.मराठी साहित्यसम्मेलन), श्री राधाकृष्णजी विखे पाटील(विरोधी दल नेता, विधानसभा), डॉ.रावसाहेबजी कसबे आदि उपस्थित थे।

शैक्षणिक, सामाजिक व सुधारणावादी दृष्टिकोन अपनाकर साहित्य सृजन करनेवाले डॉ.वाघमारेजी को यह पुरस्कार मिलने पर महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा संरक्षक स्वामी श्रद्धानंदजी, उपप्रधान राजेंद्रजी दिवे, पुस्तकाध्यक्ष प्रा.ओमप्रकाशजी होलीकर आदियों ने उनका अभिनंदन किया ।

वेदमुनिजी 'जोशी पुरस्कार' से सम्मानित

आर्य जगत् के ख्यातनाम अनुवादकर्त्ता एवं साहित्यिक प्राचार्य श्री वेदमुनिजी वेदालंकार को हाल ही में 'स्व.श्रीपाद जोशी स्मृति पुरस्कार' से सम्मानित किया गया है । अनुवादकार्य में योगदान देनेवाले किसी एक विद्वान व्यक्ति को प्रतिवर्ष यह पुरस्कार दिया जाता है । इस वर्ष के पुरस्कार के लिए भी मुनिजी का चयन किया गया। जिनके नाम से पुरस्कार दिया जाता है, वे स्व.श्रीपाद जोशी जानेमाने मराठी लेखक, समीक्षक व अनुवादक रहे हैं। महर्षि दयानन्द विरचित अमरग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' को मराठी में अनूदित करने का अप्रतिम कार्य श्री जोशी जी ने किया था । साथ ही 'समग्र क्रांतीचे अग्रदूत स्वामी दयानंद' यह मराठी चरित्र ग्रंथ भी लिखकर उन्होंने मराठी भाषिकों की स्वाध्यायतृषा को शान्त किया है । इन दोनों ग्रंथों का प्रकाशन आर्य समाज पिम्परी

व आर्य समाज सान्ताक्रुज मुंबई ने किया था। ऐसे अनुवादक की स्मृति में महाराष्ट्र साहित्य परिषद की पुणे शाखा द्वारा रखा गया यह स्मृति पुरस्कार इस वर्ष आर्य लेखक व अनुवादक श्री वेदमुनिजी को प्राप्त हुआ है। श्री मुनिजी ने आज तक लगभग ३२ मराठी ग्रन्थों का हिन्दी भाषा में अनुवाद किया है। महर्षि दयानन्द के यजुर्वेदभाष्य, रामनाथ वेदालंकार द्वारा विरचित सामवेद भाष्य तथा अथर्ववेद के कईं मन्त्रों का भी आपने मराठी में अनुवाद किया है। दि.२६ जून को पुणे पत्रकार भवन में आयोजित विशेष समारोह में यह पुरस्कार मुनिजी को प्रदान किया गया।

पुरस्कृत डॉ.वाघमारेजी एवं मुनिजी का हार्दिक अभिनंदन व बधाई !

कार्यक्रम समाचार — रोजड में क्रियात्मक योग शिविर

आर्य जगत् की प्रसिद्ध योगशिक्षास्थली 'वानप्रस्थाश्रम, आर्य वन रोजड (गुजरात)' में आगामी दि.६ से १६ नवम्बर के दौरान **'क्रियात्मक योग प्रशिक्षण शिविर'** का आयोजन हो रहा है। तपोनिष्ठ योगी पूज्य स्वामी सत्यपतिजी परिव्राजक की अध्यक्षता में आयेजित इस शिविर में योगसाधना के क्रियात्मक प्रशिक्षण के साथ ही योगदर्शन के सूत्रों का अध्यापन व अनेकों सूक्ष्म आध्यात्मिक विषयों पर विस्तार से मार्गदर्शन होगा। दिनभर की व्यस्त दिनचर्या में प्रशिक्षणार्थियों को निर्धारित नियमों का पालन करना होगा।

अधिक जानकारी हेतु दूरभाष (०२७७०) २८७४१७, २९१५५५, ९४२७०५९५५० पर सम्पर्क करें।

सम्भाजीनगर में राज्य अन्तर्जातीय विवाह सम्मेलन

महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि के तत्त्वावधान में आर्य समाज गारखेडा, सम्भाजीनगर (औरंगाबाद) द्वारा आगामी ८ जनवरी २०१७ को **राज्यस्तरीय अन्तरजातीय विवाह इच्छुक** युवक-युवतियों का **परिचय सम्मेलन** रखा गया है। मानवनिर्मित जातिप्रथा को समाप्त करने के उद्देश्य से आयोजित इस सम्मेलन में सभी आयुवाले युवक-युवतियों के साथ ही विधवा, विधुर, घटस्फोटित पुरुष-महिलाएं तथा उनके माता-पिता भी सम्मिलित हो सकते हैं। शहर के निराला बाजार परिसर में स्थित तापडिया नाट्यमंदिर में होनेवाले इस सम्मेलन में विद्वानों व आर्यनेताओं के मार्गदर्शन होंगें। अधिक जानकारी के लिए पं.रमेश ठाकूर (९४२३१७८८०३), डॉ.लक्ष्मण माने(९२२५१११११५३), एड.जोगेन्द्रसिंह चौहान (८६९८३४०००२), संतोष आर्य (९४०३०३६४५६) से सम्पर्क करें।

॥ओ३म्॥

माझा मराठाची बोलु कवतिके । परि अमृतातेही पैजेसीं जींके ।
ऐसी अक्षरेंचि रसिकें । मेळवीन ।। (संत ज्ञानेश्वर)

मराठी विभाग

उपनिषद संदेश — ईश्वरास कसे जाणावे ?

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति विश्वं न च तस्यास्ति वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरुषं पुराणम्।।

(श्वेताश्वेतर उपनिषद ३/१९)

परमेश्वराला हात नाहीत. पण तो आपल्या सामर्थ्यरुपी हातांनी जगाची रचना करतो, ग्रहण करतो. त्याला पाय नाहीत, परंतू तो सर्वव्यापक असल्यामुळे सर्वांहून अधिक वेगवान आहे. त्याला डोळे नसले तरी तो सर्वांना यथावत पाहतो. कान नसले तरी सर्व काही ऐकतो. त्याला अंत:करण नाही. तरीही तो सर्वांना जाणतो. अशा त्या परमेश्वराच्या मर्यादा(सीमा) ओळखणारा कोणीही नाही. त्यालाच सनातन, सर्वश्रेष्ठ पूर्ण असल्यामुळे पुरुष म्हणतात. इंद्रिये व अंत:करण नसतानाही तो आपल्या सामर्थ्याने सर्व कामे करतो.

दयानंद वाणी — पितरांचे खरे श्राद्ध व तर्पण

विद्वान, देव, अध्ययन-अध्यापन करणारे ऋषी, माता-पिता आदी वयोवृद्ध ज्ञानी आणि परमयोगी म्हणजे **'पितर'** होत. त्यांची सेवा करणे म्हणजे **पितृयज्ञ** होय. पितृयज्ञाचे दोन भेद आहेत. एक श्राद्ध व दुसरे तर्पण. श्राद्ध म्हणजे 'श्रत्' हे सत्याचेच नाव आहे. **'श्रत्सत्यं दधाति यया क्रियया सा श्रद्धा, श्रद्धया यत्क्रियते तच्छ्राद्धम् ।'** ज्या क्रियेने सत्याचे ग्रहण केले जाते तिला **श्रद्धा** असे म्हणतात. श्रद्धेने जे कर्म केले जाते ते **श्राद्ध** होय. तसेच **'तृप्यन्ति तर्पयन्ति येन पितृन् तत्तर्पणम्'** म्हणजे ज्या ज्या कर्माच्या योगाने विद्यमान म्हणजे हयात असणारी मातापितरे संतुष्ट होतात व ज्यांना जे संतुष्ट केले जाते, त्याला **तर्पण** असे म्हणतात. मात्र हा दोन्ही प्रकारचा पितृयज्ञ जिवंत पितरांसाठी आहे, मृत व्यक्तींसाठी नाही.

(सत्यार्थप्रकाश-४ था समुल्लास)

ऐकावे पण का व कसे ?

- पं.राजवीर शास्त्री

वक्तृत्व ही जशी एक कला आहे, तशी श्रवण ही सुद्धा एक कला आहे. व्यक्तीपासून ते समाष्टीपर्यंत सर्वांचे कल्याण-अकल्याण हे श्रवणावरच अवलंबून आहे. इच्छा असो वा नसो जन्मल्यापासून आपल्या कानावर कांही न कांही शब्द पडतातच आणि आपण ऐकतच राहतो. पण या अशा ऐकण्याला कला म्हणता येत नाही. कला म्हंटले की तिथे मर्यादा आली. सुव्यवस्था आली आणि सुंदरता ही आली ! सर्वांचे कल्याण व्हावे, यासाठी शास्त्रकारांनी तुम्हां-आम्हां सर्वांनाच काय ऐकावे व काय ऐकू नये ? याची सीमा आखून दिली आहे. तेंव्हा ऐकणाऱ्यांनी नेहमी ऐकतांना ते कशासाठी ऐकावे ? काय ऐकावे ? कोणाचे ऐकावे ? कसे ऐकावे ? याचे भान ठेवणे गरजेचे आहे, यालाच श्रवणकला म्हणायचे -

*** श्रवणेंद्रिय - कानाचे महत्त्व -**

ईश्वराने आपल्याला पाच ज्ञानेंद्रिये व पाच कर्मेंद्रिये दिली आहेत. ज्ञानेंद्रियांमध्ये डोळे व कान हे प्रमुख आहेत, तर कर्मेंद्रियांमध्ये जीभ (वाणी) व हात (पाणी) यांची प्रधानता आहे आणि या सर्वांशी आत्म्याचा संपर्क असून तोच खरा दृष्टा, श्रोता, वक्ता व कर्ता आहे, हे वेगळे सांगणे नको! मनुष्य हा सुखाचा अनुरागी व दुःखाचा द्वेषी आहे. म्हणूनच तो दुःखांना दूर सारण्याचा व सुखांना सावडण्याचा सदैव प्रयत्न करीत असतांना दिसतो. पण त्याच्या परिश्रमाला यश मात्र येत नाही. त्याचे कारण संतांच्या शब्दात सांगावयाचे झाले तर असे म्हणता येईल-

अचूक मला करवेना। म्हणून केले ते साजेना ।
आपला अवगुण जावेना। काही केल्या।।

मनुष्य आज संसारामध्ये धन-सम्पती व पत्नी-पुत्रांमध्ये सुख शोधतो आहे. शास्त्र वचनाच्या विरुद्ध वागतो आहे. शास्त्राचे सांगणे आहे की, सुख हे धनात नाही तर ज्ञानात आहे. जसे प्रकाशाशिवाय अंधःकार दूर करणे शक्य नाही, तसे वेदविद्या आत्मसात केल्याशिवाय दुःखांना दूर करणे शक्य नाही. तेंव्हा ज्ञान प्राप्त करायचे म्हंटले की, कान हवेतच. वाणीने ज्ञान प्रदान करता येते, पण कानाशिवाय ते ग्रहण करता येत नाही. जन्मान्ध व्यक्तीला श्रवण शक्तीच्या बळावर ज्ञानी होणे सहज शक्य आहे, पण जन्मानेच जो बहिरा आहे, त्याला ज्ञान प्राप्त करणे फारच अवघड आहे. यावरुन डोळ्यापेक्षा कानाचे महत्त्व अधिक आहे, हे स्पष्ट

आहे. ब्रह्मयज्ञ व देवयज्ञ हे नित्यकर्म करीत असतांना अंगस्पर्शाचे वेळी **'ओ३म् श्रोत्रं श्रोत्रम् ।'** किंवा **'ओ३म् कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ।'** असे म्हणत कानांना हाताच्या बोटांनी पाण्याचा स्पर्श केला जातो. या प्रक्रियेतून **''माझे दोन्ही कान निरोगी, निर्मळ व उत्तम श्रवण शक्तीने युक्त असावेत''** अशी प्रार्थना केली जाते.

वैद्याच्या सल्ल्याने कानाची काळजी घेतली तर कान निरोगी व निर्मळ ठेवता येतात. राहिला प्रश्न उत्तम श्रवण शक्तीचा! याबाबत दोन प्रकारे विचार करता येईल. पहिला असा की, कान एवढे खूर असावेत की, अत्यंत हळू आवाजात बोललेले ही कानाला सहज ऐकू यावे. शिवाय आवाज कोणत्या दिशेकडून आला, किती अंतरावरुन आला ? याचाही अंदाज कानाला लागावा. ही आहे उत्तम श्रवण शक्ती! दुसरे असे की, या श्रवणशक्तीचा सदुपयोग व्हावा. केवळ शरीराने निरोगी व बलवान असणे पर्याप्त नाही. कारण त्या शक्तीचा वापर पुण्य कर्मासाठी ही केला जाऊ शकतो आणि पापकर्म करण्यासाठी केला जाऊ शकतो. दु:खाची निवृत्ती व सुखाची प्राप्ती हे ध्येय गाठायचे असेल तर पुण्य(पवित्र) कर्मेच केली पाहिजेत. याचीच जाणीव अंगस्पर्श विधीमध्ये दिली गेली आहे. या विधीत प्रत्येक इंद्रियास पाणी लावले जाते. कारण पाणी हे पवित्र आहे, मलनिस्सारक व रोग निवारक आहे, ते औषध व बलदायक आहे, तृप्तीदायक आहे. नम्रता हा पाण्याचा स्वभाव आहे, परोपकार हे त्याचे कर्म असून रस हा त्याचा गुण आहे. अंगस्पर्श करतांना पाण्याच्या गुण, कर्म व स्वभावाचे चिंतन करीत राहिल्यास आपले अंत:करण पवित्र होण्यास मदत होते. अंगस्पर्श व विधीमंत्रामध्ये **'यशोबलम्'** हा शब्द आला आहे. यामध्ये यशाला प्रथम व बळाला दुय्यम स्थान दिले आहे, हे लक्षात ठेवावे.

कानाला यशयुक्त बनवायचे असल्यास कानाचे दोष अगोदर जाणून घेऊन त्यास दूर करणे आवश्यक आहे. अश्लील गाणे व विचार ऐकत राहणे, परनिंदा ऐकण्यात आवड असणे, शिव्याश्रापाचे श्रवण व स्वत:ची प्रशंसा ऐकण्याची उत्सुकता ही कानाची मलिनता आहे, हे कानाचे दोष आहेत ! संत म्हणतात –

''निंदेचे श्रवण नको माझ्या कानी । बधीर करोनि ठेवी मज ।।''

याशिवाय कानाडोळा करणे, हलक्या कानाचा असणे, कानपिसा असणे, कान टोचणे, कान भरणे,कान धरणे, कान खाणे, कान झटकणे, कानाखाली आवाज काढणे, कानात बोळे घालणे, कानाला खडा लावणे, कान टवकारणे, कान उघडे ठेवणे, कानमंत्र, कर्णधार, कर्ण, कर्ण भूषण, लंबकर्ण,

कुंभकर्ण, कर्णवंध या वाक्प्रचाराचावरुन ही कानाचे सदुपयोग व दुरुपयोग लक्षात येतात.

*** काय ऐकावे ?**

'सुश्रुतौ कर्णौ।' (अथर्व.), **'भद्रं श्रुतौ कर्णा।'** (अथर्व.) व **'भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम।'** (यजु.) ही वेदवाक्ये अत्यंत बोलकी आहेत. मनुष्याने जन्मभर जे सत्य-पवित्र व कल्याणकारक ज्ञान आणि विज्ञान आहे. त्याचेच श्रवण करावे. ज्या ज्ञानाने अभ्युदय व निःश्रेयस् या दोन्हींची सिद्धी होते, ते विचार ऐकावेत. ज्या ग्रंथामध्ये धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष या पुरुषार्थ चतुष्टयांची चर्चा आहे, त्या ग्रंथांचे श्रवण करावे. ज्या ज्ञानाने प्रगती, उन्नती, विकास व उत्कर्ष साधता येतो, ज्या ज्ञानाने जीवनातील प्रश्नांचे समाधान मिळते. अध्यात्म क्षेत्रातला संशय मिटतो, ज्या ज्ञानाने देशभक्ती व ईश्वरभक्तीचे मळे फुलतात. जे ज्ञान माणसाला माणुसकी शिकविते, ते ज्ञान श्रवण करण्यातच कानांची सार्थकता आहे. हेच कानाचे यश आणि बळ आहे. थोडक्यात सांगायचे तर वेद, वेदानुकूल ग्रंथाचे श्रवण करावे, वाल्मीकी रामायण, महाभारत, महापुरुषांचे जीवन चरित्राचे त्यांच्या थोरवीचे पोवाडे ऐकावेत. एके ठिकाणी म्हंटले आहे -

'यद्वाचा वदति, तद् मनसा ध्यायति । यद् मनसा ध्यायति, तद् कर्मणा करोति।।

यद् कर्मणा करोति तदभिसंपद्यते ।'

किंवा **'जो जे मति सापडला ।**

तयासी तेचि थोर ।।'

या वचनांचा मतितार्थ असा की, मनुष्य जो ऐकतो, त्यानुसारच त्याची मती बनते. जशी मती तशी कृती आणि जशी कृती तशी फळप्राप्ती ! वाईट विचार ऐकले तर त्याची मती दुर्मती बनेल. चांगले विचार ऐकले, तर त्याची मती सुमती बनेल. म्हणूनच आईच्या उदरी वाढत असलेल्या बाळाला सुद्धा चांगले विचार ऐकायला मिळावेत. वेदमंत्रांचे श्रवण घडावे. यासाठी ऋषि-महर्षींनी संस्कार विधीची व्यवस्था केली. बाळाचा जन्म झाल्यानंतर-जातकर्म, नामकरण वगैरे संस्कार केले जातात. उपनयन संस्कारानंतर मुलां-मुलींना वेदाध्ययनासाठी गुरुगृही पाठविण्याची आज्ञा शास्त्र देते.

'उप नः सूनवो गिरः श्रृण्वन्त्वमृतस्य ये। सुमृडीका भवन्तु ।।' (यजु.३३/७७)

यात माता-पिता दोघांनाही आदेश दिला आहे की, त्यांनी आपल्या मुला-मुलींना गुरुगृही पाठवावे. जेणेकरुन ते ब्रह्मचर्य पूर्वक गुरुजनांकडून वेदादी शास्त्रांचे उत्तम ज्ञान व शिक्षण घेऊ शकतील. शरीर व आत्म्याने बलवान होतील आणि हेच त्यांच्या हिताचे आहे. तसेच प्रौढ जनांनाही वेद विद्येचे विस्मरण होऊ नये, म्हणून श्रावणमास किंवा

चातुर्मासामध्ये वेदाच्या स्वाध्याय-श्रवणाची व वर्षभर घरोघरी पंच महायज्ञ नित्य करण्याची परंपरा घालून दिली आहे. वेद-उपनिषद, दर्शनशास्त्रादी ग्रंथ, महापुरुषांची चरित्रे किंवा 'सत्यार्थ प्रकाशा'सारख्या ग्रंथाच्या श्रवणाने विवेक जागा होतो. त्यामुळे धर्म आणि अधर्म, कार्य आणि अकार्य, न्याय आणि अन्याय व पाप आणि पुण्य यातला फरक कळायला लागतो. अशा श्रेष्ठ ग्रंथ व विचारांच्या श्रवणाने माणूस विद्वान-धर्मात्मा, चरित्रवान, सुस्वभावी व सुकर्मी बनतो. यम-नियमांचे पालन करणे त्याला सहज शक्य होते. परिवार, समाज व राज्यात अनुशासन, शिस्त व सुव्यवस्था नांदते. चोहीकडे शांततेचे, निर्भयतेचे, उल्हासाचे वातावरण बनते. आपापसात प्रेम-आदर व विश्वासाचे, सेवा व सहकार्याचे साम्राज्य पसरते. अज्ञान, अन्याय, अभाव व असंघटन यांचे उच्चाटन होते.

* ऐकावे कसे ?

ऐकतांना लक्ष देऊन ऐकावे, दक्ष होऊन ऐकावे. त्यामुळे वक्त्याची योग्यता, त्याची शैली, त्याचा प्रतिपाद्य विषय व उद्देश्य समजून घेणे शक्य होते व वक्त्याला न्याय देता येतो. लक्ष आणि दक्ष नाही राहिले, तर गैरसमज होण्याची शक्यता नाकारता येत नाही.

दुसरी गोष्ट श्रोत्यांच्या अंगी धैर्य व सहनशीलता असावी लागते, जिद्द असावी लागते. 'सत्यार्थ प्रकाशा'सारखे ग्रंथ एकदा वाचले किंवा ऐकले की, ते समजतातच असे नाही. अशा वेळी काय लिहिलेय, ते काही कळत नाही, असे म्हणून पुस्तक बाजूला ठेवले जाते किंवा वक्ता काय सांगतो ते समजत नाही, म्हणून मध्येच उठून जाण्याने पदरात कांहीच पडत नाही. कठीण विषय पुन्हा पुन्हा वाचावे व ऐकावे लागतात. त्यासाठी धैर्याची गरज असते. दुसरे असे - समजा कळले, तरीही त्याचे वारंवार श्रवण करावे लागते. धर्माच्या क्षेत्रात पुनरावृत्ती हा दोष नसून गुण मानला जातो.

'सेविलेचि सेवावे अन्न ।
घेतलेचि घ्यावे जीवन ।
श्रवण आणि मनन।
केलेचि करावे ।।'

याशिवाय बहुश्रुत व्हावं लागतं. शूर्पकर्ण व्हावं लागतं. परमात्म्याने आपल्याला एक जीभ व दोन कान दिले आहेत. त्याचा अर्थच असा की, दोन गोष्टी ऐका व एकच गोष्ट बोला. म्हणजे ऐका खूप आणि बोला कमी ! ऐकतांना मात्र कानाचा उपयोग सुपासारखा करावा. सूप जसं धान्यामधले रोगट दाणे, माती-खडे व कचरा बाहेर फेकते, तसे आपण ही वक्त्याचे वा लेखकाचे विचार पकडून व पारखून घ्यावेत. तसेच शरीर, मन व आत्मा किंवा परिवार, समाज व राष्ट्र यांच्या

आरोग्याचा व हिताचा घात करणारा विचार असेल, तर तो बाहेर फेकून द्यावा चांगले तेवढे घ्यावे, ही वृत्ती ठेवावी. जो सुखाचा, कल्याणाचा, प्रगतीचा विचार आहे,तो स्मरणात ठेवावा. एका कानाने ऐकले व दुसऱ्या कानाने सोडून दिले, असे करता कामा नये. यासाठी परमात्म्याने आपल्याला पशूसारखे हलणारे कान दिले नाहीत. तेंव्हा जो कल्याणकारक विचार आहे, तो स्मरणात साठवला पाहिजे. एखाद्या विद्यार्थ्याने दिलेला पाठ न करता तो तसाच आणला, तर गुरुजी त्याचे कान पिळतात किंवा दोन्ही हाताने त्याला स्वत:चे कान धरुन उठ-बशा काढायला सांगतात. शिवाय श्रवणाबरोबर मनन, निदिध्यासन व साक्षात्कार अशा पायऱ्या चढाव्या लागतात. पाली भाषेत श्रवण या शब्दाचा अर्थ श्रम असा होतो. जे श्रवण केले, ते आचरणात आणावे लागते. ऐकलेले जीवनात उतरविण्यासाठी श्रम करावे लागतात. ते नाही केले तर त्या ऐकण्याला ऐकणे म्हणता येत नाही. म्हणूनच श्रुती म्हणते - **'सं श्रुतेन गमेमहि, मा श्रुतेन विराधिषि ।'** (अथर्व)

वेदाच्या उपदेशाप्रमाणे वागा, त्याच्या उलटे वागू नका. वेदाचे ऐकणे म्हणजे ईश्वराचे ऐकणे होय ! फक्त कानाने आज्ञा, उपदेश अथवा विचार श्रवण करणे म्हणजे ऐकणे नव्हे. जे करावयास सांगितले गेले, त्याचे पालन करणे, तसे कर्म करणे म्हणजे श्रवण! संत म्हणतात -

'श्रवण केलियाचे फळ ।
क्रिया पालटे तात्काळ।।'

ऐकून-ऐकून माणूस तत्वज्ञानाच्या चार गोष्टी बोलायला लागतो. पण तसा वागत नसेल, तर तो **'लोका सांगे ब्रह्मज्ञान । स्वत: कोरडा पाषाण ।।'** या टिकेस पात्र होतो आणि जो **'बोले तैसा चाले, त्याची वंदिन पाऊले।'** यानुसार तो समाजात वंदनीय ठरतो.

याशिवाय व्यवहारिक क्षेत्रातही धैर्यवान, सहनशील, विवेकी, तार्किक व संयमी असणे गरजेचे आहे. बहुधा या गोष्टींच्या अभावामुळेच परिवारात, गल्लीत व गावात कटकटी वाढलेल्या असतात.

बोलणाऱ्याने सत्य बोलावे, प्रिय व मधुर बोलावे, सप्रमाण, विचार करुन बोलावे. सर्वांच्या हिताचे व पक्षपातरहित होऊन बोलावे, असे शास्त्र सांगते. पण आपण कसे बोलावे? ते आपल्या हातात आहे. पण दुसऱ्याने काय व कसे बोलावे ? ते त्याच्या हातातली गोष्ट आहे. समजा तो आपल्याशी समोर किंवा आपल्या पाठीमागे अज्ञानवश, गैरसमजातून, संशयापोटी किंवा कुणीतरी त्याचे खोटेनाटे कान भरल्यामुळे अथवा दुष्ट हेतूने आपल्याला बोलतो किंवा आपल्याविषयी बोलत फिरतो. अशा वेळेला आपण काय

करायचे ? ते आपल्या हातात आहे. आपल्याबद्दल कांही संशय घेतला जातो, टिका केली जाते किंवा आरोप केला जातो. तेंव्हा त्या टिका व आरोपांनी प्रभावित व उत्तेजित होऊ नका. जे कांही बोलले जाते, त्यावर शांतपणे विचार करा. जे कांही बोलले गेले, त्यात जर तथ्य असेल तर आपली चूक स्वीकारा व पुढे अशी चूक होणार नाही, याची काळजी घ्या. **'निंदकाचे घर असावे शेजारी'** या उक्तीप्रमाणे त्या व्यक्तीकडे पहा. असे न करता, मला नाव ठेवणारा तो किती धुतल्या तांदळासारखा आहे. त्याचे पितळ उघडे करायला मला वेळ लागणार नाही', असा विचार करणे व त्याचेशी **'तू तू मी मी करणे'** शहाणपणाचे नाही. समजा त्याचा आरोप खोटा आहे, अशा स्थितीत ही आपले मानसिक संतुलन बिघडवून घेता कामा नये. आपल्यावरील चोरीचा आरोप खोटा आहे, तेंव्हा मी चोर नाही, हे सिद्ध करण्याच्या व त्याबाबत सफाई देण्याच्या भानगडीत पडू नये. चोरीचा आरोप सिद्ध करण्याची जबाबदारी देखील त्याचीच आहे, असा विचार करा आणि 'तुला बघून घेतो, तुला दाखवतो', असे म्हणून हाणामारी करायला ही जाऊ नका. त्यात कांही लाभ नाही. हां ! कुणी हेतुपुरस्सर अफवा पसरवित असेल, बदनामीजनक विधान करुन आपल्या विषयी लोकांची मने कलुषित करण्याचा कांही तरी डाव साधण्याचा प्रयत्न करीत असेल, तर त्यांचेशी प्रीतीपूर्वक, धर्मानुसार व यथायोग्य व्यवहार करावा. त्यामुळे वाद चिघळणार नाही, लहानशा घटनेचे पुढे मोठे प्रकरण होणार नाही, याची काळजी घ्यावी. **'कर नाही त्याला डर कशाला ?'** किंवा **'हाथी चलता है, कुत्ते भौंकते हैं।'** या म्हणी अंमलात आणाव्यात. शक्यतो फालतू गोष्टींकडे दुर्लक्ष करावे. फालतू लोकांची उपेक्षा करावी. जसे मांजराला कसेही फेकले तरीही ते आपल्या चार पायांवर अलगद उभा राहते, तसे समाजकंटक वा अज्ञानी लोक वा अन्य कुणीही कांहीही बोलू देत. आपला तोल जाऊ द्यायचा नाही आणि त्या परिस्थितीतून बरेच धडे घेता येतात. ते घेत राहण्याची सवय लावून घेतली, तर त्यातून चांगलेच निष्पन्न होते.

बोलणे फार सोपे आहे, बोलणारा दोन-दोन, तीन-तीन तास सतत बोलू शकतो, पण ऐकणाऱ्याला ४०-४५ मिनिटे स्थिर बसवत नाही, ऐकण्यात मन लागत नाही. त्यातल्या त्यात प्रवचन व सत्संगात तर मुळीच लागत नाही. तमाशा, नाटक, सिनेमा, अश्लील नाच-गाणे अशा नको त्या ठिकाणी मात्र खूप लागतं. शास्त्राच्या श्रवणात गोडी आपोआप लागत नाही. गोडी निर्माण करावी लागते. यासाठी विद्वान माता-पित्यांनी आचार्य, पुरोहित साधू-संत योगी जनांनी, आप्तजनांनी प्रयत्न

करायला हवा.

आज जो तो स्वत:ला शहाणा नव्हे, तर फारच शहाणा समजतो आहे. मलाच सर्व कळते, मला कुणाचे कांहीच ऐकण्याची गरज नाही. उलट सर्वांनीच माझे ऐकले पाहिजे, या आविर्भावात सर्वजण वागताहेत. आणि त्यामुळे परिवार असो, समाज असो वा कुठली संस्था किंवा संघटना असो! अथवा राष्ट्र असो की विश्व असो, तिथे शिस्त, अनुशासन, मर्यादा व कायदा या गोष्टी मोडकळीस आलेल्या आहेत. त्यामुळे कुठलेच काम सुनियोजित, सुव्यवस्थित, सुखरुपपणे सफल होतांना दिसत नाही. **'मता-मतांचा गलबला झाला । कुणी पुसेना कोणाला।।'** किंवा **'धनगराची जत्रा, कारभारी सत्रा।'** असेच चित्र दिसते आहे. उत्तम वक्तृत्वाने जग जिंकता येते, असे म्हणतात, ते खरेही असेल! पण जगात शिस्त आणि शांतता स्थापित करायची असेल, तसेच सौख्य आणि ऐक्य निर्माण करायचे असेल तर श्रवण कलेमुळेच ते शक्य होऊ शकते, यात वाद नाही. जसे व्यक्तीने खूप ऐकावे व कमी बोलावे, हे अपेक्षित आहे, तसेच समाजात ही बोलणारे कमी आणि ऐकणारे खूप जण असावेत. तरच बोलणाऱ्याच्या शब्दाला ताकद देते. त्याच्या एकेका शब्दातून समाजात क्रांतिकारक बदल होऊ लागतो. बोलणारा जेवढा महत्वाचा आहे, त्याच्यापेक्षा ऐकणारा अधिक महत्वाचा आहे. ऐकणारे कुणीच नसतील तर बोलणे निरर्थक व निष्फळ ठरते. तेंव्हा ऐकणे म्हणजे इतरांपेक्षा स्वत:ला कमी समजणे हा गैरसमज काढून टाकावा. प्रत्येकाकडे सांगण्यासारखे कांहीं ना कांही नवीन निश्चित असते आणि प्रत्येकाकडे कांही ना कांही अज्ञान ही असतेच! ईश्वराला सोडले तर बाकी कुणीही सर्वज्ञ असू शकत नाही. म्हणून प्रत्येकाला बोलण्याची संधी द्यावी आणि श्रोता बनून त्याचे म्हणणे पूर्णपणे ऐकून घ्यावे. यावर कांही बोलणे-विचारणे असेल, तर ते नम्रपणे बोलावे व विचारावे! अशा सुसंवादाची आज गरज आहे. बोलणारा मोठा आणि ऐकणारा छोटा असे मानण्याचे कांही कारण नाही. प्रत्येकाने चांगला वक्ता व्हावं, तसं चांगला श्रोताही व्हावं! यातूनच कल्याणाचा मार्ग प्रशस्त होतो. सर्वांचे जीवन प्रकाशाने उजळायला लागते. वाद-वितंडवाद व त्यातून निर्माण होणाऱ्या बारा भानगडी यांना आळा बसतो. म्हणून पुन्हा एकदा म्हणावं वाटतं-**श्रण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्रा: ।**

***

आर्य समाज, कस्तुरबा मार्केट,
बाळीवेस, सोलापूर
मो.....

महर्षी दयानंद प्रतिपादित गृहस्थाश्रम

- डॉ.शारदा देवदत्त तुंगार

महर्षी दयानंद सरस्वती यांनी भाद्रपद शुक्ल पक्ष, संवत १९३९ म्हणजे इ.स.१८७५ साली उदयपुर(राजस्थान) येथील नवलखा भवनात बसून सुमारे तीन हजार आर्ष ग्रंथांचे प्रणयन केल्यानंतर **'सत्यार्थ प्रकाश'** ग्रंथाची रचना केली. वैचारिक ग्रंथासाठी हिंदी भाषेचा सर्वप्रथम प्रयोग महर्षी दयानंदांनी केला. तत्पूर्वी हिंदी साहित्य या नावाखाली ब्रज, अवधी मागधी, बुंदेलखंडी, मालवी, भोजपुरी, राजस्थानी इत्यादी बोली भाषेत काही पद्यरचना, प्रहसन(एकांकिका), भाटांनी राजदरबारात गायिलेली कवने प्रसिद्ध होती. परंतू वैदिक जीवन पद्धतीचे तर्कशुद्ध विश्लेषण करणारा **'सत्यार्थ प्रकाश'** हा ग्रंथ हिंदीचा पहिला वैचारिक ग्रंथ आहे. महर्षी दयानंद सरस्वती हे हिंदी गद्याचे आद्य प्रवर्तक ठरतात.

या ग्रंथात एकूण १४ प्रकरणे असून त्यांची मांडणी रीतसर झालेली आहे. यातील पहिल्या समुल्लासात ईश्वर नावाची व्याख्या, दुसऱ्या समुल्लासात मुलांचे शिक्षण, पठण-पाठण व्यवस्था, सत्यासत्य ग्रंथांची नावे, चौथ्या प्रकरणात विवाह व गृहस्थाश्रम धर्माचे विश्लेषण, पाचव्या प्रकरणात वानप्रस्थ व संन्यास आश्रमाचे विधी, सहाव्यात राजधर्म, सातव्या प्रकरणात वेद व ईश्वर, आठव्यात जगाची उत्पत्ती, स्थिती व प्रलय, नवव्यात विद्या-अविद्या, बंध व मोक्ष यांची माहिती व्यक्त केलेली आहे. दहाव्या प्रकरणात आचरण, अनाचरण, भक्ष्य, अभक्ष्य याबाबतचे मार्गदर्शन असून अंतिम चार प्रकरणात आशिया खंडात प्रचलित असलेल्या चार्वाक, जैन, बौध्द, ख्रिस्ती व इस्लाम इत्यादी उपासना पद्धतीबद्दल साधक-बाधक चर्चा केलेली आहे. प्रस्तुत लेखात चौथ्या समुल्लासातील 'विवाह व गृहस्थाश्रमा' बाबत आलेल्या विश्लेषणाचा सारांश संक्षेपाने लिहीत आहे.

वैदिक वाङ्मयात वर्णाश्रम व्यवस्थेचे समर्थन केलेले आहे. शैशवावस्थेपासून पुढची पंचवीस वर्षे नैष्ठिक ब्रह्मचर्याचे पालन करीत वेदाध्ययन करुन जीवनाची पायाभरणी ज्ञानाधिष्ठित करावी, हे अपेक्षित आहे. त्यानंतर गृहस्थाश्रमाचा स्वीकार करुन धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष या चार पुरुषार्थाच्या पूर्तीसाठी प्रयत्नांची पराकाष्ठा करावी, हे अपेक्षित आहे. गृहस्थाश्रमास अन्य तीन आश्रमांचा आधार म्हटले आहे. **'धन्योऽयं गृहस्थाश्रमः।'** म्हणतांना कुटुंबात ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी, संन्यासी, अतिथी सर्वांचे भरणपोषण व्हावे, हे अपेक्षित आहे. माणूस मूलतः एक पशू

आहे, पण उत्तम संस्कार करुन त्याच्यातील माणूसपण जागवावे लागते. त्यासाठी महर्षी दयानंद सरस्वती यांनी १६ संस्कारांची योजना केलेली असून निवडक वेदमंत्रांचा आधार घेत त्यावर भाष्य करीत विधी निश्चित केले आहेत. संस्कृतच्या कृ धातूस सम उपसर्ग लावून **'संस्कार'** शब्द बनलेला आहे. त्याचा अर्थ शुद्ध करणे, परिष्कृत करणे असा आहे. चौथ्या समुल्लासात महर्षी दयानंद सरस्वती यांनी विवाह कुणी करावा, कुणाशी करावा, कोणत्या वयात करावा, गुण, कर्मानुसार वर्णव्यवस्था कशी असते ? विवाहाचे आठ प्रकार, गृहस्थांची कर्तव्ये, पंच महायज्ञ, दानाचे महत्त्व, पाखंडी (अधर्मी)माणसाची व पंडिताची विद्यार्थ्यांची लक्षणे यासंबंधी विवेचन केले आहे.

ज्यांनी ब्रह्मचर्य व्रताचे पालन करुन आचार्याच्या आदेशानुसार वर्तन ठेवून वेदांचे सांगोपांग अध्ययन केले आहे. अर्थात शुद्ध ज्ञानसाधना केलेली आहे. अशाच पुरुषाने अथवा स्त्रीने गृहस्थाश्रमात प्रवेश करावा, असे शास्त्रवचन आहे. त्यामुळे बालविवाह आपोआपच निषिद्ध ठरतो. वधूची निवड करतांना गुण, कर्म, स्वभाव लक्षात घेऊन आपल्या वर्णानुकूल कन्या निवडावी. जन्माधारित जात पाहून नव्हे ! जी कन्या मातृघराण्याच्या सहा पिढ्यांमध्ये येत नसेल आणि पित्याच्या गोत्रातील नसेल, अशा कन्येशी विवाह करावा, असे 'सत्यार्थ प्रकाश' ग्रंथात लिहिले आहे. **'दुहिता दुर्हिता दुरेति भवतीति'** अर्थात कन्येला दुहिता म्हणतात. याचे कारण तिचे लग्न दुरच्या गावी आप्तस्वकियांपासून दूर करणेच हितावह ठरते. मुलाने किंवा मुलीने वाटल्यास जन्मभर अविवाहित राहावे, परंतु परस्पर विरुद्ध गुण-कर्म-स्वभाव असणाऱ्यांशी लग्न करु नये. लग्नाचा निर्णय मुलाने व मुलीने घ्यावा. मातापित्याची संमती घ्यावी. परंतू माता-पित्याने मुलांच्या किंवा मुलींच्या मनाविरुद्ध कदापी त्यांचे लग्न लावून देऊ नये, असे स्वामीजी लिहितात.

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ही व्यवस्था जन्माधारित नाही. याबाबत समाजात खूप गैरसमज आहेत. आर्य समाजाच्या मान्यतेनुसार वयाची पहिली २५ वर्षे गुरुकुलात राहून ज्ञानसाधना करणारा ब्रह्मचारी विद्यार्थी असतो. त्याचा कोणताही वर्ण असत नाही. वयाच्या पन्नाशी नंतर वानप्रस्थी आणि संन्यासी जीवन जगतांना तो फक्त समाजाला कल्याण मार्गावर नेणारा पथिक असतो. त्याचा कोणताही वर्ण असत नाही. तेंव्हा वर्ण केवळ गृहस्थाश्रमापुरताच मर्यादित आहे. जो अजन्म अपरिग्रह वृत्तीने राहून ज्ञानसाधना करतो. तसेच समाजाचे वैचारिक मार्गदर्शन करतो, तो ब्राह्मण! जो परचक्रापासून आणि अंतर्गत यादवीपासून समाजाचे रक्षण करतो तो क्षत्रिय! जो व्यापार उद्यम करीन वस्तूंचे उत्पादन वितरण करुन

संपत्ती निर्माण करतो आणि समाजाच्या चरितार्थाची सोय करतो तो वैश्य! तसेच जो फक्त आज्ञाधारक आहे, श्रमजीवी सेवक आहे, तो शूद्र (क्षुद्र नव्हे)! असे हे श्रमविभाजन आहे. एखाद्या कार्यालयात प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ श्रेणीचे कर्मचारी असतात. सर्वच कर्मचारी प्रथम श्रेणी (क्लास वन ऑफिसर) अधिकारी झाले, तर कार्यालयाचे दैनंदिन कामकाज ठप्प होईल.

चतुर्थश्रेणी कर्मचारी ही मूलभूत गरज आहे. त्याला तुच्छ लेखून कसे चालेल ? (पायात काटा टोचला तर डोळ्यात पाणी येते, इतकी संवेदनशीलता समाजाच्या या चातुवर्णात अपेक्षित आहे) रशियासारख्या साम्यवादी देशातसुद्धा हे चार वर्ण अस्तित्वात असतात. जात आणि वर्ण यात महत्वाचा फरक असा की, जात ही जन्मावरुन ठरते व जन्मभरासाठी चिकटते, तसे वर्णाचे नाही. तृतीय व चतुर्थ श्रेणीचे कर्मचारी स्वत:ची योग्यता वाढवून प्रथम-द्वितीय श्रेणीत विराजमान झालेले आपण पाहतो. भगवद्गीतेत योगेश्वर श्रीकृष्ण म्हणतात- **'चातुर्वर्णं मया सृष्टं गुण-कर्म विभागश:।'** अर्थात् (गावगाडा सुरळीत चालावा म्हणून) मी गुणकर्म स्वभावानुसार चार वर्णांची निर्मिती केली आहे. आपण गुण, कर्म विभागश: हे शब्द व त्यामागची भावना विसरलो आहोत. यामुळेच आज समाजात गैरसमाजाचे धुके पसरले आहे. **'सत्यार्थ प्रकाश'** ग्रंथाच्या चौथ्या प्रकरणात विवाहाचे आठ प्रकार सांगितले आहेत. तरीही सर्वोत्कृष्ट विवाह तोच, ज्यात वधू-वर सुरक्षित, सुशील, पूर्ण विद्वान, धार्मिक होऊन योग्य वयात प्रसन्नतापूर्वक परस्परांचा स्वीकार करुन गृहस्थाश्रमात प्रवेश करतात. विवाह शब्दाचा अर्थच मुळी विशिष्ट प्रकारची बंधने-जाणीवपूर्वक स्वीकारुन दृढतापूर्व त्याचे पालन-वहन करणे, असा होतो. परंतू सध्या चंगळवादी संस्कृतीत विवाह एन्जॉय करण्यासाठी केला जातो. किंबहुना त्यांचा सारा जन्मच उपभोगाची लालसा शमविण्यासाठी असतो. इंद्रियगम्य सुख जसजसे पूर्ण होते, तसेतसे त्याची 'धिक् हाव' निर्माण होते. मन हा उधळलेला घोडा आहे. त्यावर अंकुश ठेवणेच हिताचे आहे. वासनेची विषवल्ली समूळ नष्ट केल्याशिवाय अमृताचा अनुभव मिळणे नाही. पण सध्या बाजार संस्कृती भौतिक गरजा अधिकाधिक वाढवित नेणे, त्याच्या पूर्ततेसाठी सर्व साधन शुचिता बाजूला ठेवणे व त्यालाच सुधारणा म्हणणे चालले आहे. अशा आधुनिक सोशल महिला इंद्राणी मुखर्जींच्या मार्गावरुन केंव्हा चालू लागतात, हे त्यांचे त्यांनाही कळत नाही आणि जेंव्हा जाग येते तेंव्हा सारे आयुष्य हातातून निसटून गेलेले असते असे होऊ नये, असे वाटत असेल तर ऋषिमुनींनी घालून दिलेली

जीवनपद्धती, विवाहसंस्कार व गृहस्थाश्रम धर्म समजून घेणे आवश्यक आहे.

*** कर्मकांडाला फाटा :**

आर्यसमाज जन्माधारित जातीव्यवस्था मानीत नाही. तद्वतच ईश्वर उपासनेसाठी मूर्तीची गरज त्यांना वाटत नाही. मूर्तिपूजा त्यावर आधारित कर्मकांड, श्रद्धा-अंधश्रद्धा यांना फाटा दिला की, महिलांचा खूप वेळ व वायफळ खर्च वाचतो. मग गृहस्थाश्रमात कोणती उपासना पद्धती स्वीकारावी. याबाबत मार्गदर्शन करताना महर्षी दयानंद सरस्वती यांनी पंच महायज्ञाचा पुरस्कार केला.

ब्रह्म यज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, बलि वैश्वदेव यज्ञ, अतिथी यज्ञ ! सूर्योदय आणि सूर्यास्त समयी संध्या व योगाभ्यास करणे म्हणजे ब्रह्मयज्ञ. यासाठी कोणतेही साहित्य लागत नाही. एकाग्र चित्ताने परमेश्वराकडे शुद्ध बुद्धीची याचना करणे एवढेच येथे अपेक्षित आहे. देवयज्ञास अग्नीहोत्र, हवन म्हणतात. अग्नीत गायीचे शुद्ध तूप, चंदन, पलाश, औदुंबर, आम्र आदींच्या समिधा व हवन सामग्री म्हणजे सुगंधित द्रव्यांची भुकटी यांची आहुती देत वेदमंत्राचे गायन करीत ईश्वरोपासना करणे म्हणजे देवयज्ञ ! मनोबलवृद्धी व पर्यावरणशुद्धी साठी गृहस्थाने तो करावा, असे अपेक्षित आहे. तिसरा यज्ञ म्हणजे पितृयज्ञ ! यात श्राद्ध आणि तर्पण हे दोन प्रकार मानले जातात. श्रत् म्हणजे सत्य! जे सत्य आहे, ते प्रयोग, अनुमान, विश्लेषण व निष्कर्ष या आधारे तावून सुलाखून घेतल्यानंतर त्याचा स्वीकार करणे सत्य धारण करणे म्हणजे श्राद्ध.

*** श्राद्धाचा अर्थ :-**

माता-पिता, आचार्य, व योगी यांना पितर म्हणतात. जे कार्य श्रद्धापूर्वक केले जाते, त्यास श्राद्ध म्हणतात व ज्या ज्या कर्माच्या योगाने जिवंत माता-पित्यांना संतुष्ट केले जाते त्यास तर्पण म्हणतात. दोन्ही प्रकारचा यज्ञ हा जिवंत माता-पिता गुरु व साधक यांच्यासाठीच आहे. मृत व्यक्तीसाठी आर्यसमाजात कोणतेही क्रियाकर्म केले जात नाही. चौथा यज्ञ म्हणजे बलि वैश्यदेव यज्ञ ! स्वयंपाक तयार झाल्यावर त्यातून आंबट, खारट पदार्थ वेगळा व जे घृतमिश्रित, मिष्टान्न आहे ते वेगळे काढावे. त्यातील काही भाग अग्नीला आहूत करावा. उरलेले शुद्ध सात्विक अन्नाचे ताट अतिथीस द्यावे. स्वत: जेवण करण्यापूर्वी घरात आश्रयाला असलेले पाळीव प्राणी, सेवक यांची विचारपूस करुन त्यांची भूक शांत करावी. यास वैश्वदेव यज्ञ म्हणतात. अतिथी शब्दाचा अर्थ ज्याची येण्याची वेळ, दिवस निश्चित नसतो अशा आदरणीय त्यागी, तपस्वी, संन्यासी विद्वानास अगत्यपूर्वक घरी आणावे. अन्न वस्त्रादी देऊन त्यांची सेवा करावी. त्यानंतर ज्ञानविज्ञानाबाबत चर्चा करावी. त्यांचा

उपदेश आचरणात आणण्याचा प्रयत्न करावा. त्यास अतिथी यज्ञ म्हणतात. गृहस्थाश्रमात हे पंच महायज्ञ जो करतो, त्यास अन्य कर्मकांड करण्याची गरज नाही.

गृहस्थाश्रमात प्रवेश करण्यापूर्वी विवाह संस्कार होणे आवश्यक असते. 'संस्कारविधी' ग्रंथात महर्षी दयानंद सरस्वर्तीनी निवडक वेदमंत्र आणि त्याचा भावार्थ स्पष्ट करीत करावयाचा संस्कारविधी विस्ताराने वर्णिला आहे. वधू-वर परस्पर संमतीने शुभदिन ठरवितात. त्या दिवशी वर इष्टमित्रांसह वधूच्या घरी मंडपाच्या दारी येतो. वधू त्याचे सहर्ष स्वागत करते. दूध, दही, मध आदी स्वादिष्ट पौष्टिक पेय देऊन संतुष्ट करते. नंतर दोघे यज्ञवेदीवर स्थानापन्न होतात. वेदशास्त्रसंपन्न पुरोहित ईश्वरस्तुती प्रार्थनेचे मंत्र म्हणतात. वधूवरास यज्ञोपवीत देतात. त्यानंतर विवाह विधीस प्रारंभ होतो. अग्नी प्रज्वलित झाल्यानंतर त्यात शुद्ध तूप, समिधा, हवनसामुग्री यांची आहुती देत वधूवर शपथ ग्रहणास सज्ज होतात. 'वधूच्या पित्याने वधूचे सालंकृत कन्यादान करावे' हा वाक्यप्रचार प्रचलित आहे. सालंकृत शब्दाचा अर्थ कन्या गृहकृत्यदक्ष, सुशील, सुसंस्कृत असावी. सद्गुणांनी ती अलंकृत असावी. अशी अपेक्षा आहे. हिरे, माणिक, मोती, सोने, चांदी यांचे दागदागिने म्हणजे अलंकार नव्हेत. विवाह संस्कारात कन्यादान विधी आहे.

एखादी निर्जीव वस्तू उचलून देऊन टाकावी असा कन्यादान शब्दाचा अर्थ होत नाही, तर वर-वधू दोघे परस्परांचा आदरपूर्वक स्वीकार करतात. त्यास कन्यादानविधी म्हणतात. या संस्कारात स्वीकारमंत्र पाणिग्रहणाचे सहा मंत्र, शिलारोहण, लाजाहोम, सप्तपदी, अरुंधती ताऱ्याचे अवलोकन असे महत्त्वपूर्ण विधी आहेत. गृहस्थाश्रम धन्य व्हावा, म्हणून ऋषीमुनींनी वधू-वरांसाठी केलेले हे समुपदेशनच आहे. गरज फक्त समजून घेण्याची आहे.

महर्षी दयानंद सरस्वती यांनी कुंभमेळ्यात लाखो नागरिकांपुढे एकट्याने पाखंड खंडिनी पताका उभारुन अंधश्रद्धा निर्मूलनाचा प्रयत्न केला. रुढीग्रस्त, परंपरावादी व धर्माच्या नावावर धंदा करणाऱ्या अधर्मी कडून त्यांचा छळ केला. त्यांच्यावर वारंवार विषप्रयोग करण्यात आले. त्यांनी योगशक्तीने ते विष निष्प्रभ केले. तरी शेवटी दीपावली अमावस्येस १८८३ साली विषप्रयोगामुळेच त्यांना देहत्याग करावा लागला. १९ व्या शतकातील या महर्षींनी देह त्यागिला, तरी सत्याचा प्रकाश पसरविणारे दीपस्तंभासारखे त्यांचे ग्रंथ अस्तित्वात आहेत.

'निरामय', कला मंदिरामागे, वजिराबाद, नांदेड मो.....

***

वार्ता विशेष

धारुर येथे हुतात्मा दिन साजरा

हैद्राबाद स्वातंत्र्य संग्राम काळात ऐन पोळ्यादिवशी हौतात्म्य पत्करलेल्या आर्य बलिदानी हु.काशीनाथजी चिंचाळकर यांचा स्मृतिदिन नुकताच साजरा करण्यात आला. धारुर येथील आर्य समाज मंदिरात सकाळी पं.सुखपालजी आर्य(उ.प्र.) यांच्या पोरोहित्याखाली यज्ञ संपन्न झाला. यावेळी यजमान म्हणून चिंचाळकर परिवारातील सदस्य व आर्य समाजाचे पदाधिकारी उपस्थित होते. यज्ञानंतर भजन, प्रवचनाचा कार्यक्रम झाला. यात पं.सुखपालजी व सोममुनिजी यांनी मार्गदर्शन केले. आपल्या ओजस्वी भाषणातून श्री सुखपालजींनी हु.काशीनाथजी यांच्या बलिदानाची आठवण ठेऊन समाज व राष्ट्र कार्यासाठी सदैव तत्पर राहावे, असे आवाहन केले. नंतर सर्वांनी सामुहिक श्रद्धांजली समर्पित केली.कार्यक्रमास आर्य समाजाचे सर्व कार्यकर्ते व गावातील प्रतिष्ठीत नागरीक उपस्थित होते.

लातूर येथे अंतरजातीय विवाह मेळावा संपन्न

महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभेअतंर्गत आर्य समाज रामनगर, लातूर च्या सहकार्याने आंतरजातीय विवाह मंडळातर्फे दि.११ सप्टेंबर रोजी एक दिवसीय **'आंतरजातीय विवाह मेळावा'** संपन्न झाला. यात मराठवाड्यासह पुणे व इतर ठिकाणाहून अनेक युवक-युवती आणि पालक सहभागी झाले होते. प्रारंभी मंडळाचे सचिव श्री ज्ञानकुमार आर्य यांनी प्रास्ताविक केले. तर सभेचे उपप्रधान श्री राजेंद्र दिवे यांनी आपल्या भाषणातून गेल्या ४५ वर्षापासून आंतरजातीय विवाह मंडळाच्या माध्यमाने समाजातील जन्मगत जातिप्रथा नष्ट करण्यासाठी क्रियात्मकरित्या यशस्वी प्रयत्न केले असल्याचे सांगितले.

याप्रसंगी औरंगाबादचे प्रा.श्री.बैनाडे यांनीही विचार मांडले. कार्यक्रमास श्री माणिकरावजी भोसले, पद्माकर लोखंडे, अनंत लोखंडे, राऊत आदी कार्यकर्ते उपस्थित होते.

दसरा उत्सवाच्या हार्दिक शुभेच्छा !

भारतीय संस्कृतीत 'विजयपर्व' म्हणून ओळखल्या जाणाऱ्या विजयादशमी(दसरा) उत्सवाच्या सर्वांना हार्दिक शुभेच्छा ! हा विजयोत्सव आपणां सर्व आर्यांना विजयाकडे वाटचाल करण्यास प्रेरणा देवो व वाईट प्रवृत्तींवर विजय मिळवून आत्मकल्याणाचा मार्ग प्रशस्त होवो., ही शुभकामना...! – सभा

प्रांतीय सभेतर्फे राज्यस्तरीय दोन वक्तृत्त्व स्पर्धा

पू.पिताश्री स्व.विठ्ठलराव बिराजदार (तांभाळकर) स्मृती

१) राज्यस्तरीय विद्यालयीन वक्तृत्त्व स्पर्धा २०१६

विषय:-म.दयानंदांचे शैक्षणिक विचार(सत्यार्थ प्रकाश-द्वितीय सम्मुलास)

रविवार दि.२७.११.२०१६ वेळ सकाळी ११ वा.

स्थळ :- आर्य समाज, हदगांव

१) स्पर्धेत केवळ माध्य. विद्यालयाच्या (इ.८,९,१०वी) विद्यार्थ्यांना भाग घेता येईल.

२) स्पर्धेसाठी प्रत्येक विद्यालय किंवा आर्य समाजातर्फे ३-३ स्पर्धक पाठवावेत.

३) प्रत्येक स्पर्धकास भाषणासाठी (मराठी/हिंदी) ८(६+२) मिनिटे वेळ दिला जाईल.

४) प्रवेश शुल्क रु.५०/- भरून दि. २०.११.२०१६ पर्यंत स्पर्धेची नोंदणी करावी.

५) पारितोषिके १) रु.१५००, २) रु.११००, ३) रु.७७५, रु.१०० चे वैदिक साहित्य

सौ.कलावतीबाई व श्री मन्मथअप्पा चिल्ले(आनंदमुनिजी) यांच्या गौरवार्थ

२) राज्यस्तरीय महाविद्यालयीन वक्तृत्त्व स्पर्धा २०१६

विषय:म.दयानंदप्रतिपादित ईश्वराचे स्वरुप(सत्यार्थ प्रकाश-प्रथम सम्मुलास)

रविवार दि.१८.१२.२०१६ वेळ स.११ वा.

स्थळ :- आर्य समाज, सोलापूर

१) स्पर्धेत ११वी ते पदवी वर्गातील महाविद्यालयीन विद्यार्थ्यांना भाग घेता येईल.

२) प्रत्येक महाविद्यालय किंवा आर्य समाज जास्तीत जास्त ३ स्पर्धक पाठवू शकतील.

३) प्रत्येक स्पर्धकास भाषणासाठी (मराठी/हिंदी) ८(६+२) मिनिटे वेळ दिला जाईल.

४) प्रवेश शुल्क रु.५०/- भरून दि. १०.१२.२०१६ पर्यंत स्पर्धेची नोंदणी करावी.

५) पारितोषिके १) रु.२०००, २) रु.१५००, ३) रु.१०००, रु.१०० चे वैदिक साहित्य

॥ कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ॥

वेदों की ओर लौटो !

वेद प्रतिपादित मानवीय
जीवन मूल्यों को
जन-जन तक पहुँचाने हेतु
कार्यतत्पर सशक्त एवं समर्थ प्रान्तीय आर्य संगठन

महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा

(पंजीयन-एच. 333/र.नं.६/टी.इ. (७)१६७/१०४९, स्थापना ५ मार्च १९७७)

- 'वैदिक गर्जना' मासिक मुखपत्र
- आर्य समाज दिनदर्शिका
- पू. हरिश्चन्द्र गुरूजी गौरव-'मानवता संस्कार एवं आर्यवीरदल शिविर'
- आर्य कन्या वैदिक संस्कार शिविर
- पातञ्जल ध्यानयोग शिविर
- प्रान्तीय आर्य वीर दल प्रशिक्षण शिविर
- पुरोहित प्रशिक्षण शिविर
- मानव जीवनकल्याण वेद प्रचार (श्रावणी) उपाकर्म अभियान
- स्व. विठ्ठलराव बिराजदार स्मृति विद्यालयीन राज्य. वक्तृत्व स्पर्धा
- सौ. तारादेवी जयनारायणजी मुंदडा विद्यालयीन राज्य.निबंध स्पर्धा
- सौ. कलावतीबाई व श्री मन्मथअप्पा चिल्ले (आनन्दमुनि) महाविद्यालयीन राज्य. वक्तृत्व स्पर्धा
- विद्यार्थी सहायता योजना
- सौ.डॉ. विमलादेवी व श्री डॉ.सु.ब.काले (ब्रह्ममुनि) महाविद्यालयीन राज्य. निबन्ध स्पर्धा
- स्व.पं. रामस्वरूप लोखण्डे स्मृति संस्कृत राज्य प्रतियोगिताएं
- मानवजीवन निर्माण अभियान - विद्यालय व महाविद्यालयों के लिए (वैदिक व्याख्यानमाला)
- शान्तिदेवी मायर स्मृति मानवनिर्माण एवं सेवा योजना
- स्व. भसीन स्मृति एवं मायर गौरव स्वास्थ्य रक्षा एवं चिकित्सा शिविर
- शान्तिदेवी मायर विधवा सहायता योजना
- वैदिक साहित्य भेट योजना
- पंथ-जातिप्रथा निर्मूलन अभियान
- वैदिक साहित्य प्रकाशन योजना
- आपत्कालीन सहायता योजना
- पर्जन्यवृष्टि यज्ञ अभियान
- गौ-कृषि सेवा योजना
- स्वा.सै.श्री गुलाबचंदजी लदनिया गौरव राज्य योगासन प्रतियोगिता
- सौ.धापादेवी गु. लदनिया गौरव राज्य प्राणायाम प्रतियोगिता

शिक्षाविद् डॉ.वाघमारेजी का अभिनंदन!

पद्मश्री विखे पाटील साहित्य जीवनगौरव पुरस्कार प्राप्त डॉ.जे.एम.वाघमारेजी का अभिनंदन करते हुए सभा के संरक्षक स्वामी श्रद्धानन्दजी एवम् उपप्रधान श्री राजेन्द्र दिवे।

सभा की त्रैमासिक बैठक-धर्माबाद

दि.२८ अगस्त को धर्माबाद में आयोजित सभा की त्रैमासिक बैठक मार्गदर्शन करते हुए मंत्री माधवराव देशपांडे तथा प्रधान डॉ.ब्रह्ममुनिजी।

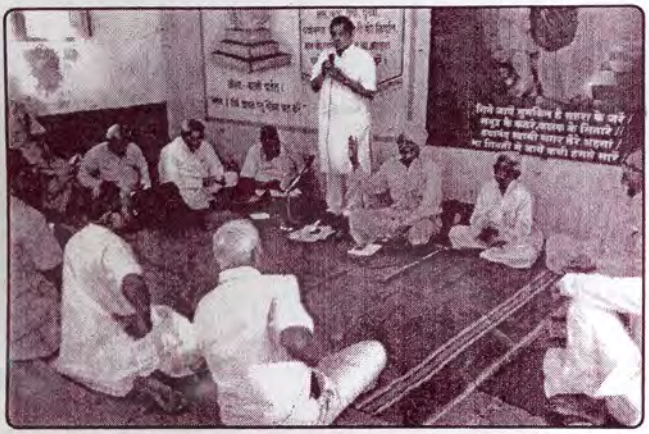

अंतरंग सदस्यों व कार्यकर्त्ताओं के साथ सभा के पदाधिकारी।

परिवारों के प्रति सच्ची निष्ठा, सेहत के प्रति जागरुकता, शुध्दता एवं गुणवत्ता, करोंडों परिवारों का विश्वास, यह है एम.डी.एच.का इतिहास जो पिछले ९० वर्षों से हर कसौटी पर खरे उतरे हैं -जिनका कोई विकल्प नहीं। जी हां यही हैं आपकी सेहत के रखवाले -

लाजवाब खाना ! एम.डी.एच. मसाले हैं ना !

MDH

मसाले

असली मसाले

सच-सच

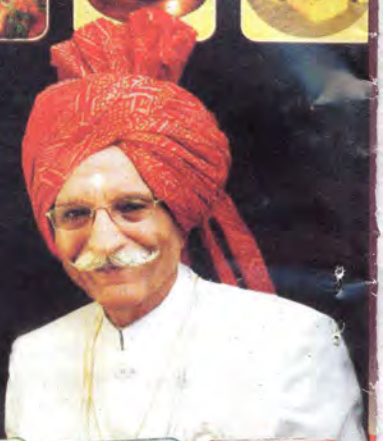

आर्य जगत् के दानवीर भामाशाह
महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त
महाशय धर्मपालजी

MAHASHIAN DI HATTI
DEGGI
ESTD. 1919

MAHASHIAN DI HATTI LTD.

Regd. Office : MDH House,
9/44 Kirti Nagar, New Delhi-110015.
Ph. : 25939609, 25937987
Fax : 011-25927710
E-mail : mdhltd@vsnl.net
Website : www.mdhspices.com

REG.No. MAHBIL/2007/7493 ★Postal No. L/Beed/18/2015-17

सेवा में,
श्री _____

प्रेषक
मन्त्री महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा,
आर्य समाज, परळी वैजनाथ.
पिन ४३१ ५१५ जि.बीड. (महाराष्ट्र)

यह मासिक पत्र सम्पादक व प्रकाशक श्री मन्त्री, महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा वैदिक प्रिंटर्स, परली वैजनाथ इस स्थलपर मुद्रित कर 'महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा' कार्यालय 'आर्य समाज, परली वैजनाथ ४३१ ५१५ जि.बीड (महाराष्ट्र)' इस स्थान से प्रकाशित किया।

जीवेत् शरदः शतम् ।

परोपकार, समाजसेवा, वेदप्रचार, शिक्षाप्रसार तथा नागपुर शहर व विदर्भ, म.प्रदेश में आर्य समाज की गतिविधियों को बढाने में कार्यतत्पर आदर्श आर्य दम्पती

श्री.पं.सुरेन्द्रपालजी आर्य
(प्रसिध्द भजनोपदेशक व गीतकार, नागपुर)

सौ.करुणादेवी आर्या
(अवकाशप्राप्त मुख्याध्यापिका, मन्त्राणी, महिला आर्य समाज, जरीपटका, नागपुर)

के गौरव में 'वैदिक गर्जना' मासिक का रंगीन मुखपृष्ठ सस्नेह भेंट !